गांधीजी के जीवन के प्रेरणादायक प्रसंग

त्याग हृदय की वृत्ति है

मेरा जीवन ही मेरा संदेश है

मो. क. गांधी

त्याग हृदय की वृत्ति है

गांधीजी के जीवन के प्रेरणादायक प्रसंग

सम्पादक
विष्णु प्रभाकर

१९८१
सस्ता साहित्य मंडल,
श्रीकृष्ण जन्म-स्थान सेवा-संस्थान
का संयुक्त प्रकाशन

प्रकाशक

यशपाल जैन
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल
एन ७७, कनॉट सर्कस, नई दिल्ली

श्रीकृष्ण जन्म-स्थान
सेवा-संस्थान
मथुरा

चौथी बार : १९८१

मूल्य : तीन रुपये

मुद्रक
अग्रवाल प्रिंटर्स
दिल्ली

प्रकाशकीय

महात्मा गांधी उन महापुरुषों में से थे, जिन्होंने मनुष्य के चरित्र को सबसे अधिक महत्व दिया। वह मानते थे कि समाज की बुनियादी इकाई मनुष्य है। यदि वह अपने को सुधार ले तो समाज अपने आप सुधर जायगा।

अपनी इस मान्यता को व्यक्त करने से पहले उन्होंने अपने जीवन को कसौटी पर कसा। सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य आदि ग्यारह व्रतों का पालन किया और दूसरों द्वारा किये जाने का आग्रह रखा। दैनिक जीवन की छोटी-से-छोटी और बड़ी-से-बड़ी बातों में वह बराबर जागरूक रहे और अपने सिद्धान्तों पर दृढ़तापूर्वक चलते रहे।

इस पुस्तक-माला की दस पुस्तकों में उनके जीवन के चुने हुए प्रसंग दिये गये हैं। ये प्रसंग इतने रोचक, शिक्षाप्रद तथा प्रेरणादायक हैं कि कोई भी पाठक उनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता।

ये पुस्तकें गांधी जन्म-शताब्दी वर्ष में प्रकाशित हुई थीं। हाथों-हाथ बिक गयीं। कुछ के नये संस्करण हुए। कुछ के नहीं हो पाये। कागज और छपाई के दामों में असामान्य वृद्धि हो जाने के कारण उन्हें सस्ते मूल्य में देना असंभव हो गया। पर पुस्तकों की मांग निरन्तर बनी रही।

हमें हर्ष है कि अब यह पुस्तक-माला 'सस्ता साहित्य मंडल' तथा 'श्रीकृष्ण जन्म-स्थान सेवा-संस्थान' के संयुक्त प्रकाशन के रूप में निकल रही है। उसके प्रसंग कम नहीं किये गये हैं, पृष्ठ उतने ही रखे गये हैं, फिर भी मूल्य कम-से-कम रखा गया है।

हमें आशा ही नहीं, पूरा विश्वास है कि पाठक इस पूरी पुस्तक-माला को खरीदकर मनोयोगपूर्वक पढ़ेंगे और इससे अपने जीवन में भरपूर लाभ लेंगे।

—मंत्री

भूमिका

जो बात उपदेशों के बड़े-बड़े पोथे नहीं समझा सकते, वह उन उपदेशों में से किसी एक को भी जीवन में उतारने के समझ में आ जाती है। इसलिए गांधीजी कहते थे कि मेरा जीवन ही मेरा सन्देश है। उनके जीवन का यह सन्देश उनके दैनन्दिन जीवन की घटनाओं में प्रदर्शित और प्रकाशित होता है।

संसार के तिमिर का नाश करने के लिए मानव-इतिहास में जो व्यक्ति प्रकाश-पुंज की भांति आते हैं उनका सारा जीवन ही सत्य और ज्ञान से प्रकाशित रहता है। गांधीजी के जीवन में यह बात साफ दिखाई देती है। इस पुस्तक-माला में गांधीजी के जीवन के चुने हुए प्रसंगों का संकलन करने का प्रयास किया गया है। उनका प्रकाश काल के साथ मन्द नहीं पड़ता। वे क्षण में चिरन्तन के जीवन के किसी पहलू को प्रदर्शित करते हैं। उनकी प्रेरणा स्थानीय न होकर विश्वव्यापी है।

ये प्रसंग गांधीजी के जीवन से सम्बन्धित प्रायः सभी पुस्तकों के अध्ययन के बाद तैयार किये गए हैं। हर प्रसंग की प्रामाणिकता की पूरी तरह रक्षा की गई है। फिर भी वे अपने आपमें सम्पूर्ण और मौलिक है।

यह पुस्तक-माला अधिक-से-अधिक हाथों में पहुंचे तथा भारत की सभी भाषाओं में ही नहीं, वरन् संसार की अन्य भाषाओं में भी इसका अनुवाद हो, ऐसी अपेक्षा है। मैं आशा करता हूं कि यह पुस्तक-माला अपनी प्रभा: से अनगिनत लोगों के जीवन को प्रेरित और प्रकाशित करेगी।

रंगनाथ दिवाकर

विषय-सूची

विचार जबतक आचरण के रूप में प्रकट नहीं होता, वह कभी पूर्ण नहीं होता। आचरण आदमी के विचार को मर्यादित करता है। जहां विचार और आचार के बीच पूरा-पूरा मेल होता है, वहीं जीवन भी पूर्ण और स्वाभाविक बन जाता है।

मो० क० गांधी

त्याग
हृदय की वृत्ति है

: १ :

त्याग हृदय की वृत्ति है

व्यक्तिगत-सत्याग्रह अभी आरम्भ नहीं हुआ था। वायसराय से बातें चल रही थीं। गांधीजी हरिजन-निवास में ठहरे हुए थे। भारत के अनेक चोटी के नेता भी वहीं थे। देश का भाग्य संकट में था।

उस समय हिन्दी के लेखक श्री रामनाथ 'सुमन' भी वहीं ठहरे हुए थे। उनकी पत्नी राजयक्ष्मा रोग से पीड़ित थीं। तबतक इस रोग का अचूक इलाज नहीं निकला था। इसलिए सुमनजी बहुत चिन्तित थे। इसी चिन्ता के कारण वह गांधीजी से मिलने भी नहीं गये। लेकिन गांधीजी तो सबकुछ जानते थे। एक दिन जब वह वायसराय से मिलने के लिए चले तो सुमनजी बरामदे में बैठे अखबार पढ़ रहे थे। गांधीजी को उधर से ही होकर जाना होता था। कुछ दूर पैदल चलकर मुख्य सड़क पर वह मोटर में बैठते थे। सुमनजी ने उन्हें आते हुए देखा। उनका सामना न हो, यह सोचकर वह तुरन्त अन्दर के कमरे में चले गये, लेकिन दो मिनट भी नहीं बीत पाई थीं कि गांधीजी कमरे में आकर खड़े हो गये और अपनी अप्रतिम खिलखिलाहट के बीच बोले, "चोर पकड़ा गया!"

इसके बाद इतने दिनों तक न मिलने और पत्नी का समा-

चार न देने के लिए सुमनजी को खूब फटकारा। सुमनजी ने उत्तर दिया, "आप इतने महत्वपूर्ण कामों में लगे हैं। अपनी कष्टकथा में आपको उलझाकर आपका समय कैसे नष्ट करता!"

बिगड़कर गांधीजी ने कहा, "तुम ऐसा कहते हो!"

फिर वह पत्नी को धीरज बंधाते रहे। जाते समय उन्होंने सुमनजी को आज्ञा दी, "सब काम छोड़कर केवल इनकी सेवा-शुश्रूषा करो।"

बाद में उन्होंने इसी संदर्भ में सुमनजी को लिखा, "आन्दोलन में भाग लेने की आसक्ति का त्याग ही तुम्हारे लिए सच्चा त्याग है। त्याग हृदय की वृत्ति है। तुम अपनेको पंगु अनुभव करते हो। पंगु भी सेवा कर सकता है। इस समय तुम्हारा स्वधर्म यही है।"

: २ :

इसमें अनुचित क्या है?

दक्षिण अफ्रीका से लौटने के कुछ दिन बाद ही गांधीजी शांतिनिकेतन पहुंच गये थे। उनकी मंडली उस समय वहीं पर ठहरी हुई थी। काकासाहेब कालेलकर भी उन दिनों वहीं पर थे। उस दिन बहुत रात तक वे दोनों बातें करते रहे। सवेरे उठकर साथ-साथ प्रार्थना की। उसके बाद काकासाहेब आदि सभी लोग मजदूरी के लिए चले गये।

वहां से लौटकर वे क्या देखते हैं कि उनके लिए अलग-अलग थालियों में नाश्ता और फल आदि सबकुछ संवारकर तैयार रखे हुए हैं।

काकासाहेब सोचने लगे—वे सब तो काम पर गये थे, फिर यह सब मेहनत किसने की ? मां का यह स्नेह किसने उनपर लुटाया ? उन्होंने गांधीजी से पूछा, "यह सब किसने किया है ?"

उन्होंने उत्तर दिया, "क्यों ? मैंने किया है।"

काकासाहेब संकोच के साथ बोले, "आपने क्यों किया ? आप यह सब करें और हम बैठे-बैठे खायं, यह मुझे उचित नहीं मालूम देता।"

गांधीजी ने कहा, "क्यों, इसमें अनुचित क्या है ?"

काकासाहेब बोले, "आप जैसों की सेवा लेने की योग्यता हममें होनी चाहिए न !"

सहज भाव से गांधीजी बोले, "निश्चय ही तुम उसके योग्य हो। तुम सब तो काम पर गये थे। नाश्ता करने के बाद फिर काम पर जुट जाओगे। मुझे अवकाश-ही-अवकाश था, इसलिए मैंने तुम लोगों का समय बचाया। एक घंटा काम करके यह नाश्ता करने की योग्यता तुमने अपने-आप प्राप्त कर ली है।"

: ३ :

चोरों से आप इतना डरते हैं !

ट्रावनकोर मंदिर-प्रवेश घोषणा के समारोह का सभापतित्व करने के लिए गांधीजी त्रिवेन्द्रम गये थे। एस० के० जार्ज वहीं रहते थे और उन दिनों उनकी पत्नी अस्वस्थ थीं। उनका घर उस गेस्ट हाउस के पास ही था, जहां गांधीजी ठहरे हुए थे। संध्या के समय भोजन के बाद गांधीजी ने अपनी लाठी उठाई और जार्ज की पत्नी से मिलने के लिए निकल पड़े।

रात के ९ बजे थे। घर में घासलेट का एक छोटा-सा चिराग जल रहा था। उसी समय जार्ज के कानों में महादेवभाई की आवाज आई। झांककर देखते क्या हैं कि गांधीजी तालाबन्द फाटक के बाहर अपने दल-सहित खड़े हुए हैं।

तुरन्त दौड़कर जार्ज ने ताला खोला। मुस्कराते हुए गांधीजी ने अन्दर प्रवेश किया। कहा, "तो चोरों से आप इतना डरते हैं!"

घर के भीतर आने पर जार्ज ने गांधीजी से ड्राइंगरूम में बैठने की प्रार्थना की। गांधीजी ने तुरन्त उत्तर दिया, "मैं आपकी पत्नी से मिलने आया हूं, न कि आपसे।"

वह बेधड़क उनकी पत्नी के कमरे में चले गये और उनकी खटिया के पास बैठकर स्वास्थ्य-संबंधी बातें करने लगे।

वस्तुतः सवेरे जार्ज स्वयं गांधीजी से मिलने गये थे, लेकिन भेंट नहीं हो सकी थी। महादेवभाई को अपनी पत्नी की बीमारी

की सूचना देकर ही वह लौट आये थे। उस समय रामचन्द्रन ने उनसे कहा था, "कोई बात नहीं, मोहम्मद ही पर्वत के पास पहुंच जायगा।"

जार्ज ने उत्तर दिया था, "हम इस योग्य कहां कि प्रभु हमारे घर पधारें!"

लेकिन प्रभु तो पधार गये थे।

: ४ :

पिताजी, आज बड़ा अच्छा नाटक है

अपने पिता की चर्चा करते हुए गांधीजी ने स्वयं कहा है, "मेरे पिता छोटे-से-छोटा काम भी नौकर-चाकरों से नहीं करवाते थे, बल्कि मुझसे ही करवाते थे। मेरे प्रति उनकी आसक्ति कुछ अलौकिक थी। ऐसा पिता बिरला ही होगा। मैंने जिस दिन नाटक देखा, उस दिन मेरे पिता सिर पीटकर रोये थे।"

गांधीजी ने जिस घटना की ओर संकेत किया है वह इस प्रकार है : उस दिन सदा की तरह वह अपने पिता के पैर दबा रहे थे। दबाते-दबाते मन में विचार उठा कि आज छुट्टी मिल जाय तो बड़ा अच्छा हो। नाटक देखने को मिले।

साहस करके उन्होंने पिताजी से कहा, "पिताजी..."

पिताजी क्यों सुनने लगे! जान गये कि आज लड़के का चित्त कहीं-न-कहीं लगा हुआ है। गांधीजी ने दूसरी बार कहा, "पिताजी, आज बड़ा अच्छा नाटक है।"

पिताजी ने तब भी कोई जवाब नहीं दिया, लेकिन गांधीजी के मन में तो मोह पैदा हो गया था। पिताजी के मौन से वह भंग नहीं हुआ। तीसरी बार कहा, "आज बड़ा अच्छा नाटक है। देखने जाऊं?"

इस बार पिताजी ने कहा, "जाओ।"

स्पष्ट ही इसका अर्थ था कि मत जाओ, लेकिन गांधीजी के पास अर्थ समझने का अवकाश कहां था! वह तुरन्त नाटक देखने के लिए चले गये। रंगमंच का पहला पर्दा उठा कि तभी घर से आकर एक आदमी ने खबर दी, "पिताजी रो-रोकर सिर पीट रहे हैं।"

अब गांधीजी की समझ में आया। वह तुरन्त घर पहुंचे और पिताजी से क्षमा मांगी। पिताजी कुछ भी नहीं बोले। एक भी कड़वा शब्द नहीं कहा। बस, सिर पीटकर अपनी नापसन्दगी बता दी। उसके बाद उनके जीवन-काल में गांधीजी ने कभी नाटक नहीं देखा।

: ५ :

समूह में रहने का अक्सर अमूल्य लाभ मिलता है

स्वाधीनता से पूर्व मार्च, १९४७ में गांधीजी बिहार में घूम रहे थे। वहां भी साम्प्रदायिक आग लगी हुई थी। जब वह पटना में ठहरे हुए थे, वहां से प्रतिदिन प्रार्थना करने के लिए गांव में

जाते थे और वापस लौट आते थे। पांच-छः घंटे इसीमें बीत जाते थे। उस दिन भी ऐसा ही हुआ। गांधीजी बहुत थक गये। फिर आंख बंद करके थोड़ी देर टहले। उसके बाद वह सोनेवाले थे, लेकिन तभी पता लगा कि उनकी फाइल में से कोई कागज इधर-उधर हो गया है। उसे ढूंढ़ने में काफी देर लग गई। वास्तव में एक भाई वह कागज ले गये थे। मनु को इस बात का पता नहीं था। गांधीजी ने उससे कहा, "यह कागज इस फाइल में से इधर-उधर चला गया, इसकी कोई बात नहीं। उन भाई ने लिया था, लेकिन मैं इसे तुम्हारी ही भूल मानता हूं। मैं जितनी भूल तुम्हारी देखूंगा उतनी और किसीकी नहीं। आफिस के काम में, व्यक्तिगत काम में, घर के काम में, अथवा व्यावहारिक काम में, किसीकी भी भूल होगी, उसे मैं तुम्हारी ही भूल मानूंगा, क्योंकि तुम्हें यह मानना चाहिए कि तुम नौआखाली की तरह यहां भी अकेली ही हो। वहां ऐसी भूल कभी नहीं होती थी, क्योंकि वहां अकेले तुम्हींको सब काम संभालना होता था, परन्तु अकेले में जो परीक्षा होती है उससे अधिक कठोर परीक्षा होती है समूह में। इसलिए समूह में रहने से अक्सर अमूल्य लाभ मिलता है। जब समूह में रहते हुए भी तुम दृढ़ और जागृत रहोगी तो कुशल बन जाओगी।"

इस प्रकार मनु को उसके उत्तरदायित्व का ज्ञान कराने के बाद ही उस रात गांधीजी सोने के लिए गये।

मैं मन का गुलाम नहीं बनूंगा

दक्षिण अफ्रीका में एक बार गांधीजी ने किसी कारणवश उपवास किया था। उनके एक जर्मन साथी कैलनबैक उस समय जोहानिसबर्ग में रहते थे। उन्हें यह सूचना चार दिन बाद मिली। उपवास चौदह दिन का था। वह व्याकुल हो उठे। उन्होंने तुरन्त गांधीजी को तार दिया, "मैं आ रहा हूं।"

दूसरे दिन वह शाम की गाड़ी से चार बजे पहुंचनेवाले थे। दो-ढाई बजे के लगभग बिस्तर पर लेटे-लेटे गांधीजी बोले, "जिसे मेरे साथ स्टेशन चलना हो, तैयार हो जाय। प्रेस या शाला में जिसका काम है, वह न आये।"

इतना कहकर वह बिस्तर से उठे, लाठी ली, चप्पल पहनी और चल पड़े स्टेशन की ओर। रावजीभाई पटेल भी उनके साथ थे। सब लोग स्टेशन पहुंचे। गाड़ी आई और कैलनबैक नीचे उतरे। उन्होंने गांधीजी को स्टेशन पर देखा तो चकित रह गये। बोले, "मैं तो समझता था कि आप बिस्तर पर होंगे।"

गांधीजी ने हँसते-हँसते कहा, "हां, था तो बिस्तर पर ही, मुझसे यह सहन नहीं हुआ कि तुम मुझे बिस्तर पर पड़ा समझकर वहां से यहां भागे चले आओ। मेरे लिए इतनी अधिक चिन्ता क्यों हो? इतना अधिक मोह किसलिए? मैं तीन मील चलकर तुम्हारे सामने यह बताने के लिए आया हूं कि मैं बिस्तर पर नहीं पड़ा रहा।"

कैलनबैक यह सुनकर बहुत खुश हुए और सब लोग बातें करते-करते आश्रम वापस आ गये। लेकिन गांधीजी के मन में तो यह प्रश्न दिन-भर उमड़ता रहा। संध्या की प्रार्थना के बाद सबको सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा, "तुम लोग गीता के श्लोक कण्ठस्थ कर लो, तो इससे मैं प्रसन्न नहीं होऊंगा। इतिहास पढ़ो या न पढ़ो, गणित करो या न करो, संस्कृत पढ़ो या न पढ़ो, मुझे कोई चिन्ता नहीं, परन्तु यह आवश्यक है कि तुम संयम-व्रत धारण करो। मुझे यही चाहिए। मैं मनुष्य का गुलाम बनना चाहूंगा, पर अपने मन का नहीं। मन का गुलाम बनने से बढ़कर और कोई अधम पाप नहीं। इसलिए तुम समझ-बूझकर मन को संयम में रखना सीखो। ऐसी स्थिति में ही तुम मेरे पास रह सकोगे, नहीं तो मुझे किसीकी जरूरत नहीं। मैं तुममें से किसीको भी सिखाने का अभिमान नहीं रखता। मेरे पास एक शिष्य है, जिसे सिखाना बड़े-से-बड़ा काम है। उसे शिक्षा देकर ही मैं तुम्हारा, हिन्दुस्तान का या मानव-जाति का भला कर सकूंगा और वह शिष्य मैं खुद ही हूं। इसे मैं अपना मन कहता हूं। इस प्रकार जो अपनेको अपना शिष्य बनायेंगे, वे ही यहां रहने के लायक हैं।"

: ७ :

अंग्रेजी सीखने की विचारधारा के पीछे दोष है

सुप्रसिद्ध जैन विद्वान पण्डित सुखलाल अंग्रेजी सीखने के लिए बहुत उत्सुक थे। किसी प्रसंग में उन्होंने गांधीजी को लिखकर पूछा कि वह किस तरह और किस स्थान पर यह भाषा सीखने की सुविधा पा सकेंगे ?

यरवदा-जेल से गांधीजी का उत्तर आया, "तुम्हारी अंग्रेजी सीखने की विचारधारा के पीछे दोष तो है, लेकिन अगर तुमने दृढ़ निश्चय ही कर लिया है तो अवश्य सीखो। इस काम के लिए शान्तिनिकेतन ठीक रहेगा।"

इस संबंध में कुछ वर्ष पूर्व भी पण्डितजी ने गांधीजी से विचार-विनिमय किया था। उसी संदर्भ में इस उत्तर का महत्व है। उस समय गांधीजी ने स्पष्ट शब्दों में कहा था, "अंग्रेजी भाषा तो पृथ्वी जैसी विशाल है। अगर तुम जैसे लोग उसमें शक्ति खर्च न करें तो कुछ बिगड़ेगा नहीं। तुम जो-जो शास्त्र जानते हो, उन संस्कृत, प्राकृत और पाली के शास्त्रों के ठीक-ठीक अर्थ और तत्वों को प्रकाशित करना कोई सरल काम नहीं है। वह तो अनन्त शक्ति का आकांक्षी है। इसलिए उनके रहस्य-चिन्तन में ही अपनी शक्ति क्यों नहीं लगाते ?"

दो क्षण रुककर वह फिर बोले थे, "देखो न, राजचन्द्रजी[1] की

१. इन्हें गांधीजी ने अपने तीन गुरुओं में माना था।

स्मृति अपार थी। एक बार पढ़ने या सुनने-भर से उन्हें अपरिचित अंग्रेजी भाषा की पुस्तक का कोई भी पृष्ठ याद रह जाता था, किन्तु वह उसके जंजाल में नहीं पड़े, बल्कि अपना गहन चिन्तन और मनन जारी रखा। इस प्रकार वह और भी अच्छी और नई चीजें दे गये। तुम भी उनके रास्ते पर क्यों नहीं चलते?"

: ८ :

नहीं, मुझे तो सोना चाहिए

सन् १९२७ में हरिद्वार में कुम्भ के मेले के अवसर पर अखिल भारतीय खादी प्रदर्शनी का आयोजन किया गया था। पं० मदनमोहन मालवीय उसका उद्घाटन करनेवाले थे और गांधीजी भी उस अवसर पर उपस्थित रहनेवाले थे।

जब गांधीजी आये तो गहनों से लदी एक सेठानी उनके चरण स्पर्श करने के लिए तेजी से आगे आई। गांधीजी ने उसकी ओर देखा। मुस्कराकर बोले, "कुछ दक्षिणा भी देगी या कोरा प्रणाम करेगी?"

सेठानी ने अपने पति की ओर देखा। सेठ ने जेब से नोट निकाले, लेकिन गांधीजी बोले, "नहीं-नहीं, मुझे तो सोना चाहिए।"

सेठानी ने अपना हार उतारकर गांधीजी को दे दिया। गांधीजी बोले, "इतने से क्या होगा?"

सेठानी ने एक-एक करके सारे गहने उतार दिये, बोली, "बस, महात्माजी, अब तो सन्तुष्ट हो ?"

गांधीजी जोर से हँसे और बोले, "अभी कहां ?"

सेठ ने कहा, "अब तो मेरे पास कुछ भी नहीं है।"

सेठानी के पैरों के बिछुओं की ओर इशारा करते हुए गांधीजी बोले, "और ये ?"

सेठानी ने उन्हें भी उतार दिया, परन्तु गांधीजी अभी भी संतुष्ट नहीं हुए थे। बोले, "वादा करो कि अब गहने कभी नहीं पहनोगी।"

सेठानी ने वादा किया।

: ९ :

हिन्दुस्तान जाकर हिमालय देखना

दक्षिण अफीका की बात है। श्री जमनादास जेल से छूटकर गांधीजी के पास पहुंच गये थे। अकस्मात गांधीजी ने सूचना दी कि जमनादास और मणिलाल दोनों को शनिवार को दोपहर की ट्रेन से केपटाउन से जाना है। उस दिन बुधवार था। शनिवार को सवेरे ११ बजे स्टीमर से दीनबन्धु एंड्रयूज को इंग्लैंड के लिए रवाना होना था। गांधीजी की बात सुनकर मणिलालभाई ने उनसे कहा, "यदि हम लोग सोमवार को यहां से जायं तो कैसा रहे ? रविवार के दिन डा० गुल के साथ हमें यहां का प्रसिद्ध शिखर 'टेबुल माउन्टेन' देखना है।

लेकिन गांधीजी ने यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। उन्होंने आग्रहपूर्वक कहा, "टेबुल माउन्टेन में देखने की बात ही क्या है! देखना हो तो हिन्दुस्तान जाकर हिमालय देखना। हिमालय में तो कई हजार 'टेबुल माउन्टेन' समा जायंगे।"

डा० गुल और उनकी माताजी ने भी सिफारिश की। लेकिन गांधीजी नहीं माने। उनको सन्देह था कि ये लोग मौज-शौक में फंस गये हैं। डा० गुल का कमरा आलीशान था। अंग्रेजों जैसा उनका ठाठ-बाट था। उन्हींके साथ भोजन की मेज पर बैठकर ये लोग भोजन करते थे। यही सब देखकर गांधीजी ने दोनों को अपने पास नहीं टिकने दिया। एक को रहने देते तो वह पक्षपात माना जाता।

: १० :

मेरी चले तो . . .

बिहार प्रवास में घूमते-घूमते एक दिन गांधीजी मसूढ़ी पहुंचे। स्टेशन पर बेशुमार भीड़ थी। बड़ी मुश्किल से वह मोटर तक पहुंच सके। वह एक पाठशाला में ठहरे। संध्या को छः बजे प्रार्थना हुई। पटना से भी अधिक लोग यहां आये थे। वातावरण बड़ा सात्विक था। पटना में, जनता के शिक्षित होने पर भी, रामधुन शुरू करने पर ताल देने की तालीम देनी पड़ती थी, लेकिन यहां देहातियों ने तालबद्ध रामधुन एक ही आवाज पर अपना ली। गांधीजी बहुत प्रसन्न हुए। उनको बधाई देते हुए

बोले, "आपने ताल बहुत अच्छी दी है। सभी भाई-बहनों ने रामधुन में भाग लिया, यह अच्छा है, परन्तु मेरी यह यात्रा मौज उड़ाने और आनन्द करने के लिए नहीं है। दुःख से भरी है, इसीलिए प्रायश्चित्त-स्वरूप है। चारों ओर बर्बादी-ही-बर्बादी दिखाई देती है। मुझे ऐसा लगता है, जैसे यह अपराध मैंने ही किया है, क्योंकि मेरे भाइयों ने किया है। ऐसे समय आप जय-घोष करें या पुष्पहार पहनाएं, यह अच्छा नहीं लगता, उलटा दुःख होता है। अच्छा तो यह हो कि जिन लोगों ने अपराध किया है, वे मेरे पास आकर उसे स्वीकार कर लें, उसका प्रायश्चित्त करें, तो सरकार उन्हें परेशान न करे, ऐसी कोशिश मैं करूंगा। मनुष्य से भूल हो ही जाती है, परन्तु यदि वह अपनी भूल स्वीकार करके दुबारा वैसी भूल न करे और सारा जीवन बदल ले तो उसे जेल भेजने या पुलिस के हवाले करने की आवश्यकता ही नहीं रहती। ऐसा आदर्श अहिंसक राज्य कायम हो तो पुलिस पर जो इतना खर्च देश को करना पड़ता है, वह न करना पड़े। मेरी चले तो मैं पुलिसवालों के हाथों में बन्दूक की बजाय फावड़ा, कुदाली और हल इत्यादि दे दूं, जिससे ये गांवों को सुधारें और खेती करें।"

प्रार्थना के बाद गांधीजी घर आये। बहुत थक गये थे। लेट गये। तभी एक भाई ने आकर कहा, "मुझे गांधीजी से मिलना है। मैं अपना अपराध स्वीकार करना चाहता हूं।"

और जब गांधीजी ने उसे अपने पास बुलाया तो वह अत्यन्त गद्गद् हो उठे। गांधीजी ने बड़े प्रेम से उन्हें शान्त किया। पानी पिलाया। जो काम सरकार की पुलिस और सी० आई० डी०

न कर सकी, उसे गांधीजी के प्रेम ने क्षणभर में कर लिया, लेकिन गांधीजी को जरा भी अचरज नहीं हुआ। उन भाई के जाने के बाद वह सहज भाव से बोले, "मैं दक्षिण अफ्रीका से यह काम करता आया हूं। मेरे जीवन में ऐसा होता ही रहा है। ऐसे काम ईश्वर की सहायता के बिना नहीं होते। मैं तो रामजी का नचाया नाचता हूं।"

: ११ :

मैं नहीं चाहता कि मजदूरों पर दबाव डाला जाय

अहमदाबाद में उन दिनों मिल-मालिकों और मजदूरों में झगड़ा चल रहा था। मिल-मालिकों की ओर प्रमुख थे श्री अम्बालाल साराभाई। मजदूरों की ओर से गांधीजी आंदोलन का संचालन कर रहे थे। झगड़ा होने पर भी दोनों पक्षों में पूरा सद्भाव बना हुआ था। एक दिन अम्बालाल साराभाई का एक निजी और गुप्त पत्र गांधीजी के पास आया। पत्र बहुत लम्बा था। गांधीजी ने उसे पढ़ा और फाड़ डाला। फिर उसका उत्तर लिखने लगे। उनके निजी सचिव महादेवभाई उनके पीछे खड़े हुए थे। उन्होंने उस उत्तर को पढ़ लिया। जब गांधीजी पत्र समाप्त कर चुके तो महादेवभाई ने कहा, "लाइये, इसकी नकल कर दूं।"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "इसकी नकल नहीं की जा सकती।

ऐसी चीजें प्रकाशित नहीं हो सकतीं। डायरी में भी नहीं लिखी जा सकतीं।"

महादेवभाई बोले, "जितना मुझे याद हो गया है, उतना तो लिखूंगा ही।"

गांधीजी ने कहा, "भले ही लिखो।"

मिल-मालिकों की तालाबन्दी का आखिरी दिन था। श्री अम्बालाल को आशा थी कि बहुत-से बुनकर काम पर आ जायंगे, परन्तु आया कोई नहीं। सम्भवतः इसी बात की चर्चा करते हुए श्री अम्बालाल ने वह पत्र लिखा था कि मजदूरों ने आनेवाले मजदूरों पर दबाव डाला है, इसीलिए वे नहीं आये। गांधीजी को उन्हें ऐसा करने से रोकना चाहिए।

गांधीज़ी ने इसका जो उत्तर दिया, उसका भाव इस प्रकार था: "आपका पत्र मिला और पढ़कर मैंने उसे फाड़ डाला। मैंने यह चाहा ही नहीं कि मजदूरों पर दबाव डाला जाय। मजदूरों पर दबाव डालने के सम्बन्ध में आप अधिक निश्चित बातें लिखेंगे तो मैं जरूर बन्दोबस्त करूंगा। मजदूर काम पर जायं या न जायं, इसकी मुझे परवा नहीं। किसी भी आदमी को मिल में जाते हुए जबरन न रोकने की हिदायत मैं देता रहा हूं। मैं यह चाहता ही नहीं कि मजदूर इच्छा के विरुद्ध मिल में ही न जायं। कोई मजदूर मिल में जाने की इच्छा प्रकट करे तो उसे मैं खुद मिल में छोड़ आने को तैयार हूं।"

: १२ :

मैं उन्हें कैसे निराश कर सकता हूं ?

जलियांवाला हत्याकांड के बाद पंजाब का दौरा करते हुए गांधीजी जालंधर पहुंचे। वह जनता के आराध्यदेव थे। उनके दर्शनों के लिए असंख्य व्यक्ति इकट्ठे हुए थे। उस अनियंत्रित भीड़ ने उन्हें कुचल भी डाला। उनके पैर में बड़ा तेज दर्द होने लगा और शाम होते-होते उन्हें तेज बुखार चढ़ आया। राजकुमारी अमृतकौर के एक भाई डाक्टर थे। संयोग से वही उस समय वहां सिविल सर्जन थे। उन्होंने प्रार्थना की, "चौबीस घंटे के लिए आप अपना सफर रोक दीजिए।"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "मैं उन बहुत सारे लोगों को, जो जगह-जगह मेरी राह देखते होंगे, कैसे निराश कर सकता हूं ? मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि सुबह दस बजे तक, जो मेरी ट्रेन के छूटने का समय है, मैं ज्वर से मुक्त हो जाऊंगा।"

राजकुमारी अमृतकौर ने गर्म जल से भरी हुई एक बोतल उनके पास भेजी कि वह सफर में उसे अपने साथ रखें।

लेकिन सुबह होते-न-होते वह बोतल लौटकर राजकुमारी के पास ही आ गई। साथ में महादेवभाई के हाथ का लिखा धन्यवाद का पत्र था। लिखा था, "आपको जानकर खुशी होगी कि जालंधर छोड़ने के पूर्व ही गांधीजी का बुखार रफूचक्कर हो गया। इसलिए बोतल की अब कोई आवश्यकता ही नहीं रही।"

अपनी गलती मानना ही सच्ची विजय है

राजकोट रियासत में होनेवाले सुधारों को लेकर वहां के ठाकुरसाहब और गांधीजी में मतभेद पैदा हो गया था। गांधीजी ने इस प्रश्न को लेकर अनशन भी किया। अन्त में यह समस्या निर्णय के लिए भारत के मुख्य न्यायाधीश सर मॉरिस ग्वायर को सौंप दी गई। उन्होंने जो निर्णय दिया वह सर्वथा गांधीजी के अनुकूल था।

परन्तु कुछ ही दिन बाद गांधीजी को ऐसा लगा कि इस प्रश्न को मुख्य न्यायाधीश को सौंपने में उन्होंने ग़लती की है। यह अहिंसा का मार्ग नहीं था। उन्होंने तुरन्त एक पत्रक निकालकर इस निर्णय को ताक में रख देने का निश्चय किया।

अन्य बातों के अतिरिक्त इस पत्रक में उन्होंने लिखा, "मेरा यह कार्य अहिंसातत्व के सर्वथा विरुद्ध था। उस निर्णय पर निर्भर रहकर अपने मन का ओछापन व्यक्त करने के बाद मैं यह आशा क्यों करूं कि दरबार वीरावाला ही उदारता दिखावें? विश्वास से ही विश्वास पैदा होता है। मुझमें ही विश्वास का अभाव था, पर आखिर मेरा खोया हुआ धैर्य मुझमें लौट आया है। जनता के सामने अपनी भूलें स्वीकार कर लेने और उसपर पश्चात्ताप करने के कारण अहिंसा पर मेरी श्रद्धा एक तरह से तेजस्वी हो गई है।"

लेकिन गांधीजी का यह कार्य उनके साथियों को पसंद नहीं आया। उनकी बड़ी बहन, जो इस सत्याग्रह में बड़ी सक्रिय थीं, बड़ी दुःखी हुई।

कस्तूरबा ने गांधीजी से अनुरोध किया कि वह बहन को समझावें।

गांधीजी हँसकर बोले, "तुम ही क्यों नहीं समझा देतीं ?"

कस्तूरबा ने कहा, "मैं स्वयं ही यह सब कहां समझती हूं ?"

गांधीजी ने कहा, "तो तुम समझ लो। दक्षिण अफ्रीका में जब तुम बहुत बीमार पड़ गई थीं और डाक्टरों ने कहा था कि यदि तुम्हें चिकन सूप (मुर्गी का शोरबा) नहीं दिया गया, तो मर जाओगी ! तब तुमने सूप लेने के बजाय मरना पसन्द किया था। तुम्हें भगवान पर अत्यन्त निष्ठा थी, इसीलिए तो तुमने मांस न खाने की अपना प्रतिज्ञा भंग करके जान बचाने की कोशिश नहीं की। मैं भी अपना अनशन तबतक चालू रख सकता था जबतक वे लोग इस बात को कबूल करते कि प्रजा को दिये हुए वचन का पालन करने के लिए वे तैयार हैं। पर मेरा मन चंचल हो उठा। मृत्यु के भय से अंग्रेज सरकार की मदद लेने का मोह मेरे मन में पैदा हो गया। यह निर्णय उसी पाप का फल है। मुझे इसका त्याग करना जरूरी है।"

कस्तूरबा ने ठाकुरसाहब और दरबार वीरावाला ने जो अड़चनें पैदा कर दी थीं उनकी चर्चा की; लेकिन गांधीजी बोले, "मेरी ही भूल का यह सारा परिणाम है। मैंने उतावलापन दिखाया, इसलिए भगवान् ने मुझे दण्ड दिया और सच तो यह

है कि यह मेरी हार नहीं है। अपनी भूल स्वीकार करने में हार नहीं होती। यह बात तुम बहन को समझा दो। अपनी गलती मानना ही सच्ची विजय है।"

: १४ :

हम दोनों ईसामसीह की राह पर चलेंगे

एक विदेशी महिला गांधीजी से मिलने के लिए आईं। उनके सामने आने पर वह कुछ कांप रही थीं। वह कंपन प्रीति और आह्लाद का कंपन था। शायद कुछ भय भी था। गांधीजी ने कहा, "आओ-आओ, इतनी गुलाबी क्यों हुई जा रही हो? सब ठीक है। खत मिला था?"

महिला इतनी विह्वल-विभोर थीं कि सहसा उत्तर न दे पाईं। अत्यन्त परिश्रम करने पर इतना ही कह सकीं, "पत्र तो नहीं मिला है।"

चकित-भाव से गांधीजी बोले, "लेकिन वह तो प्रेम-पत्र था। यह न समझना कि मैं बुड्ढा हूं।"

सुनकर महिला आरक्त हो आईं। फुसफुसाकर कुछ बोलीं, शायद गांधीजी ही उस भाषा को समझ पाये। बोले, "सच, वह मेरे प्रेम की पत्री थी। लम्बी, कई सफे की। अच्छा, अब हिन्दुस्तान आ ही गई हो यहां सेवा करो।"

महिला ने कहा, "मैं यहां की भाषा नहीं जानती।"

गांधीजी बोले, "यह तो अच्छा है। मुंह आप ही बंद रहेगा। किसीने तुमसे बात की और तुमने दो अंगुली मुंह के आगे रख लीं। वही समझेगा गूंगी है।"

यह कहते-कहते वह खिलखिलाकर हँस पड़े। महिला भी गद्गद थीं, लेकिन दूसरे ही क्षण गांधीजी सहसा गम्भीर हो उठे और इंजील में से कुछ उद्धृत करते हुए बोले, "हम अन्तिम होंगे...वहां पहले पिछले हो जायंगे और पिछले पहले..." यह वाक्य तुम्हारी इंजील का ही है न? सब तो नहीं, पर 'गिरि-प्रवचन' मैंने पढ़ा है। अच्छा, अब भारत में रहोगी। यह तुम्हारा देश होगा। हम दरिद्र हैं, पर दरिद्र में नारायण बसते हैं।"

आत्मविभोर हो महिला उन्हें देखे जा रही थी। पर न तो पूरी तरह देख पाती थी और न पूरी तरह बोल पाती थी। गांधी-जी कहते रहे, "हम दोनों ईसामसीह की राह पर चलेंगे, लेकिन अब तुम उस कोने में जा बैठो। चुपचाप बैठी रहो। बाकी कल।"

कहकर वह अपने कागजों में डूब गये और महिला स्तब्ध, उठी और बताये हुए कोने में चुपचाप जा बैठी।

नहीं, इसे तो मैं इसके मालिक के पास भेजूंगा

गांधीजी चम्पारन से लौट रहे थे। बड़ी तेज गर्मी थी। बहुत ही साधारण स्थिति का एक और आदमी उसी डिब्बे में सफर कर रहा था। बाद में पता लगा कि वह पुलिस का आदमी था। लेकिन उसने पटना स्टेशन पर खूब पंखा झला। रात का समय था। गांधीजी को नींद आ गई। उस समय उनके पैर उस आदमी की दरी पर थे और उसे वहीं उतरना था। यदि वह अपनी दरी उठाता तो गांधीजी के जग जाने का भय था। बस, वह दरी छोड़कर चला गया।

गांधीजी जब जागे तो उन्हें इस बात का पता लगा। वह बड़े चिंतित हुए। बोले, "चुपचाप काम करनेवाले ऐसे व्यक्ति इस स्थान पर अभी हैं।"

महादेवभाई भी इस घटना से बड़े प्रभावित हुए। उन्हें लगा, जैसे उन्होंने भी अभी तक सेवा का ऐसा मूक कार्य नहीं किया है।

एक मारवाड़ी बैठा-बैठा यह सब देख-सुन रहा था। जब गांधीजी मुगलसराय स्टेशन पर उतरने लगे तो वह बोला, "यह दरी मुझे दे दीजिये न ? आप अब इसका क्या करेंगे ?"

गांधीजी ने कहा, "नहीं, इसे तो मैं इसके मालिक के पास भेजूंगा।"

: १६ :

जब तार तुमने खोला था तो...

गांधीजी उन दिनों लाहौर में थे कि सरदार पटेल के छूटने का तार आया। वह तार चन्द्रशंकर शुक्ल ने लिया। उसे पढ़कर उन्होंने गांधीजी तथा अन्य सभी साथियों को यह सूचना दे दी।

ठक्करबापा उस समय वहां नहीं थे। इसलिए शुक्ल ने इस बात की सूचना उनके सेक्रेटरी को दे दी। संभवतः किसी कारण-वश वह ठक्करबापा से इस संबंध में कुछ नहीं कह सके।

दोपहर को ठक्करबापा गांधीजी से मिलने आये तब उन्हें इस बात की सूचना मिली। गांधीजी ने तुरन्त शुक्ल से पूछा, "तार किसने खोला था ?"

शुक्ल ने जवाब दिया, "जी, मैंने खोला था, लेकिन उस समय ठक्करबापा यहां नहीं थे। इसलिए उनके सेक्रेटरी से मैंने कह दिया था।"

गांधीजी बोले, "यह कैसे हो सकता है ? जब तार तुमने खोला था, तो सबसे पहले तुम्हें ही सबको सूचना देनी चाहिए थी। मेरी दृष्टि में यह बात सूक्ष्म शिष्टाचार की कमी जाहिर करती है।"

मैं अपनी फिक्र आप कर लूंगा

नमक-सत्याग्रह का आन्दोलन समाप्त हो चुका था। गांधीजी वायसराय लार्ड इर्विन से बातचीत कर रहे थे। वह प्रायः प्रतिदिन उनसे मिलने जाया करते थे और घंटों बातचीत करने के बाद लौटकर तुरंत कार्यसमिति को उसका विवरण देते थे। एक दिन ऐसा हुआ कि वह कोई बात स्वीकार कर आये थे। जब उन्होंने उस स्वीकृति की सूचना कार्यसमिति को दी तो कुछ सदस्य चिन्तित हो उठे। किसीने कहा, "इस बात से तो आपकी बदनामी होगी।"

बिना किसी झिझक के गांधीजी बोले, "आप लोग मेरी बदनामी और नेकनामी की फिक्र न कीजिये। मैं अपनी फिक्र आप कर लूंगा। आप लोग अपनी फिक्र कीजिये। आप यदि इस बात को स्वीकार नहीं करते तो मैं अभी वायसराय के पास जाऊंगा और उनसे कह दूंगा कि यह शर्त हमें मंजूर नहीं है। मैं उसे वापस लेता हूं।"

लेकिन ऐसा करने की शक्ति किसीमें नहीं थी। सब सदस्य मौन हो गये।

क्या तुम भी विश्वासघात करोगे ?

उन दिनों गांधीजी पर्णकुटी में उपवास कर रहे थे। उनकी देखरेख का विशेष भार श्री बृजकृष्ण चांदीवाला पर था। वही उनका कमोड साफ करते थे। सहसा एक दिन उनसे गांधीजी ने पूछा, "आज कमोड किसने साफ किया है ?"

बृजकृष्णजी ने उत्तर दिया, "मैं किसी और काम में लगा हुआ था। मेरी गैरहाजिरी में भंगी आया और साफ कर गया।"

गांधीजी बोले, "इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए कि नौकरों से कोई काम न लिया जाय।"

इसी प्रकार उनके नीचे जो गद्दा बिछता था उसे दूसरे दिन धूप में डाल दिया जाता था। उनके पास खादी का यही एक गद्दा था। धूप में डाल देने पर दूसरे गद्दे की जरूरत होती थी, परन्तु पर्णकुटी में वैसा कोई दूसरा गद्दा नहीं था। इसलिए मिल के कपड़े का गद्दा बिछाकर उसपर खादी की चादर डाल दी गई।

पर गांधीजी की दृष्टि से यह छिपा न रह सका। उन्होंने उस गद्दे को देख लिया। तुरन्त पूछा, "गद्दा खादी का क्यों नहीं है ?"

बृजकृष्णजी ने सफाई देने का प्रयत्न किया, परन्तु गांधीजी के सामने उनकी एक न चली। वह बोले, "भरोसा रखकर सबकुछ तुमपर छोड़ दिया है, तो क्या तुम मेरे साथ इस प्रकार विश्वासघात करोगे ?"

क्या गुमराह सन्त ज्यादा खतरनाक नहीं होता ?

भारत-व्यापी सत्याग्रह के प्रथम चरण में जब देश के कई स्थानों पर दंगे भड़क उठे तब बहुत-से लोगों को यह विश्वास हो गया कि सरकार अब शीघ्र ही गांधीजी को गिरफ्तार कर लेगी। अहमदाबाद में सेना की असाधारण गतिविधि के कारण यह विश्वास और भी दृढ़ होता जा रहा था।

इसी समय गांधीजी बम्बई से अहमदाबाद के लिए रवाना हुए। उन्होंने देखा कि महादेव देसाई आदि सभी व्यक्ति कुछ घबराये हुए हैं। उन्होंने कहा, "तुम सब आज घबरा क्यों रहे हो।"

महादेवभाई ने उत्तर दिया, "क्या घबराने का कारण आपको प्रतीत नहीं होता ?"

गांधीजी ने कहा, "नहीं, यह सब अकारण है।"

महादेवभाई बोले, "यह तैयारी क्या सूचित करती है ? क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि सरकार ने आपको ज़रा अपना बल संगठित करने के लिए ही छोड़ रखा है ? यह सब तैयारी अब आपको पकड़ने की ही दिखाई देती है।"

गांधीजी हँस पड़े और बोले, "अरे, क्या बात करते हो ! मुझे क्या पकड़ेंगे ? उनकी ताकत नहीं। यह सच है कि औरों को पकड़ेंगे, परन्तु मुझे नहीं पकड़ सकते। हां, मुझे ये लोग अलग

जरूर कर देना चाहते हैं।"

महादेवभाई ने कहा, "बापू, आप भले ही ऐसा कहें, परन्तु मेरा ख्याल है, अब उनमें ऐसा करने की हिम्मत हो जायगी। इनपर आ बने तो गोली भी चला देंगे।"

गांधीजी ने कहा, "अरे, क्या बात करते हो? इनका ऐसा साहस कैसे हो सकता है? यह तो बड़ी करुण घटना हो जायगी।"

महादेवभाई बोले, "सरकार को प्रैट और सर विलियम विन्सेन्ट जैसे राक्षस मिले हैं। वे तो सबपर गोली चला सकते हैं।"

गांधीजी ने कहा, "तुम्हारी बात सच है। इन्हें शर्म नहीं है, परन्तु यह बात नहीं हो सकती। यह उनकी परम्परा के विरुद्ध है। वे उस हद तक नहीं जायंगे। देखो न, सावरकर जैसे पर भी गोली नहीं चलाई। अजीतसिंह जैसे पर भी नहीं चलाई, तो फिर मुझपर क्या चलायेंगे!"

महादेवभाई ने कहा, "बापू, रेजीनल्ड क्रेडॉक ने आपके लिए क्या लिखा है सो आपको मालूम है? उसने लिखा है, 'एक गुमराह सन्त सौ आन्दोलनकारियों से अधिक भयंकर है।' वह आपको ऐसा दुश्मन मानता है, तो आपके साथ कुछ भी कर सकता है।"

गांधीजी बोले, "वह जो कहता है, उसमें गलत क्या है? क्या गुमराह सन्त ज्यादा खतरनाक नहीं होता? यह दूसरी बात है कि मैं गुमराह नहीं हूं। वैसे यदि गोली चला दें तो बड़ा मजा आ जाय, परन्तु चला नहीं सकते। मुझ पर तो हर्गिज नहीं।"

महादेवभाई ने कहा, "आपने गवर्नर को उकसाने में कसर नहीं रखी। उसे सीधी चुनौती दे आये हैं कि तुम से जो हो, सो कर लेना। आपने जो कुछ कहा होगा, उसका एक-एक अक्षर विकृत होकर शिमला पहुंचेगा। दक्षिण अफ्रीका में आप हजारों की संख्या में थे। यहां हम मुट्ठीभर हैं।"

गांधीजी बोले, "दक्षिण अफ्रीका में तो सच्चे सत्याग्रही उंगली पर गिनने लायक ही थे। यहां बहुत अधिक हैं। जो हो, मैं देख रहा हूं कि देश का सितारा बड़ा बुलन्द है। ऐसा ऊंचा पहुंचेगा कि पूछो नहीं। मुझपर गोली चला दें तो बलवा ही हो जाय, क्रांति ही मच जाय और ऐसा होने पर जो रक्तपात हो, उसके लिए मैं रत्तीभर भी जिम्मेदार नहीं समझा जाऊंगा।"

महादेवभाई ने कहा, "पूछना तो जरा विचित्र है, पर अगर आपको फांसी लगा दें और तब आपके अनुयायियों को गुस्सा आ जाय और वे खून बहायें तो क्या ऐसा करना आपकी आत्मा को दुःख पहुंचाना होगा?"

गांधीजी बोले, "बेशक! तब तो यही कहा जायगा कि ये लोग सत्याग्रह का एक अक्षर भी नहीं समझे। सत्याग्रह अपवित्र हो जायगा। उसे अपार हानि पहुंचेगी। तुम केवल इतना कर सकते हो कि ऐसे जबरदस्त सत्याग्रही कदम उठाते रहो कि तुम्हें भी फांसी लगा दें।"

हमारे रीति-रिवाज रद्दी हैं

बिहार-प्रवास में गांधीजी साम्प्रदायिक दंगे को शान्त करते घर-घर घूम रहे थे, लेकिन इसी कारण उनके दूसरे कार्यक्रमों में कोई व्यवधान नहीं पड़ता था। मनु उनके साथ थी, वह उनकी देखभाल करती थी तो उनसे पढ़ती भी थी। प्रतिक्षण वह उसे जीवन के जीने की सीख देते रहते थे।

और वह स्वयं भी तो पढ़ते थे। प्रार्थना नियमित चलती थी। लोग मिलने आते थे। उस दिन लगभग तीन बजे डा० सैयद महमूद साहब के लड़के महबूबभाई अपनी नई दुलहन के साथ उनका आशीर्वाद लेने के लिए आये। बहू ने गांधीजी के पैर छुये और सौ रुपये उनके हाथ में रखे। मनु पास ही खड़ी थी। विनोद करती हुई बोली, "बापूजी, रिवाज तो ऐसा है कि विवाह करने पर जब नई बहू आती है तो वह सबको प्रणाम करती है और सब लोग उसे भेंट देते हैं। आपको भी भाभी को देना चाहिए था, लेकिन यहां तो सब उलटा हो रहा है। यह बेचारी आपको देती है और आपको ये सौ रुपये भी कम लगते हैं।"

गांधीजी बोले, "हमारे रीति-रिवाज रद्दी हैं। असल में लड़के को अबतक मां-बाप ने ही पाल-पोसकर बड़ा किया है, पढ़ाया है, उसकी शादी की है, अब तो उसीको मां-बाप को देना चाहिए।"

सारा कमरा मुक्त हंसी से गूंज उठा।

समय की पाबन्दी करनी चाहिए

दार्जिलिंग में देशबन्धु चित्तरंजनदास बीमार थे। गांधीजी उन्हें देखने के लिए वहीं गये। उनके पास कई दिन रहे। उसके बाद पहाड़ पर से उतरकर उनका दौरा शुरू हो गया। उन्हें नवाबगंज पहुंचना था और इसके लिए सबसे पहले जलपाईगुडी से दार्जिलिंग-कलकत्ता मेल पकड़कर पोड़ाडीह जाना था, फिर वहां से गोश्रालन्दो जानेवाली ढाका मेल पकड़नी थी। उसके बाद नवाबगंज तक अगनबोट से यात्रा करनी थी।

लेकिन रेल के रास्ते पर पहाड़ का एक हिस्सा टूटकर गिर गया था। इस कारण दार्जिलिंग-कलकत्ता मेल डेढ़ घंटा देर से पहुंचनेवाली थी। अब पोड़ाडीह में ढाका-मेल पकड़ पाने की कोई सम्भावना नहीं थी। इस सबका मतलब था नवाबगंज का कार्यक्रम चूक जाना।

लेकिन ऐसा कैसे हो सकता था! गांधीजी वादा कर चुके थे और वादा तोड़ना उनके स्वभाव के विरुद्ध था। कुछ भी हो, वहां समय पर पहुंचना ही होगा।

श्री सतीशचन्द्र दास गुप्ता ने कहा, "अब तो स्पेशल ट्रेन का प्रबन्ध हो तभी नवाबगंज ठीक समय पर पहुंचा जा सकता है। इसके लिए ११४० रुपये देने पड़ेंगे।"

गांधीजी ने तुरन्त उत्तर दिया, "तुम स्पेशल का इन्तजाम करो। जितनी सख्ती से मैं वायसराय को दिये हुए समय की

पाबन्दी रखता हूं उतनी ही सख्ती से मुझे जनता को दिये गए समय की पाबन्दी रखनी चाहिए। मुझे समय पर नवाबगंज पहुंचनी ही चाहिए।"

और गांधीजी ठीक समय पर नवाबगंज पहुंचे।

: २२ :

वे स्वयं ही तुम्हें बुलायेंगे

'भारत छोड़ो'-आन्दोलन से कुछ दिन पूर्व महात्माजी ने अचानक श्रीप्रकाश को बुलाने का आदेश दिया। जवाहरलाल नेहरू उस समय वहीं थे। जब श्रीप्रकाश वर्धा पहुंचे तो नेहरूजी ने उनसे कहा, "महात्माजी तुम्हें जोधपुर भेजना चाहते हैं।"

श्रीप्रकाश को बड़ा आश्चर्य हुआ, लेकिन वह जैसे ही महात्माजी के पास गये तो उन्होंने कहा, "तुम जोधपुर चले जाओ। वहां शासन और राजनैतिक कार्यकर्ताओं में बड़ा संघर्ष मचा हुआ है। जयनारायण व्यास बड़ी उच्चकोटि के कार्यकर्ता हैं। वह इस समय जेल में पड़े हैं। तुम वहां की राजनैतिक स्थिति का अध्ययन करके मुझे विवरण दो।"

श्रीप्रकाश बड़े असमंजस में पड़ गये। देशी राज्यों की राजनीति के बारे में वह कुछ भी नहीं जानते थे, लेकिन इससे पहले कि वह 'हां' या 'ना' कहें, गांधीजी ने जोधपुर की मिसल निकालकर उन्हें दी, वहां की स्थिति समझाई और फौरन ही उन्हें चले जाने का आदेश देते हुए कहा, "मैं तार दे रहा हूं। तुमको वहां

पर वे सब लोग मिलेंगे और सारी स्थिति बतला देंगे।"

आखिर श्रीप्रकाश मारवाड़ पहुंचे। वह स्थान जोधपुर रियासत की सीमा से बाहर था और वहीं से आन्दोलन का संचालन हो रहा था। वहां के कार्यकर्ता उन्हें स्टेशन पर मिले और उन्हें सब बातों से अवगत करा दिया। चलते समय श्रीप्रकाश ने गांधीजी से पूछा था कि यदि उन्हें रास्ते में रोक लिया गया, तो वह क्या करेंगे और यदि पहुंच गये तो क्या वहां के अधिकारियों को सूचना दें? गांधीजी ने उत्तर दिया था, "वे लोग तुम्हें राज्य से बाहर निकाल दें तो तुम फिर जाने का प्रयत्न करना और यदि पहुंच जाओ तो किसीको सूचना देने की आवश्यकता नहीं। वे स्वयं ही तुम्हें बुलायेंगे।"

सचमुच ही उनके आश्चर्य की सीमा न रही, जब उनके जोधपुर पहुंचने के दो घंटे के भीतर ही वहां के नायब दीवान धर्मनारायण काक के कार्यालय का एक कर्मचारी वहां आया और बोला, "दीवानसाहब सर डोनाल्ड फील्ड इस समय जोधपुर में नहीं हैं, पर यदि आप कल दिन में अमुक समय सचिवालय आयें तो नायब दीवानसाहब आपसे मिलना चाहेंगे।"

गलती स्वीकार कर ली होती तो नम्रता सीखती

दोपहर को प्रतिदिन गांधीजी मिट्टी की पट्टी पेट पर रखकर सोते थे। मिट्टी बिखर न जाय, इसलिए उसपर एक कपड़ा लपेटकर सेफ्टी पिन लगा दी जाती थी। एक दिन ऐसा हुआ कि वह पिन प्रमादवश दूसरी जगह रख दी गई। जो लड़की पट्टी तैयार करती थी वह उसे खोजने पर भी न पा सकी। गांधीजी अप्रसन्न होंगे, यह डर भी उसे था, इसलिए उसी आकार की एक दूसरी पिन उसने वहां लगा दी। बेचारी, वह यह कहां जानती थी कि गांधीजी की वह पिन एक विशेष प्रकार की होती थी, जिससे खरोंच न लग सके। संयोगवश किताबों की अलमारी में रखी हुई वह पिन गांधीजी को मिल गई। उस दिन जब वह लड़की पट्टी बांधने आई, तो गांधीजी ने उससे पूछा, "यह पिन कहां से आई ?"

लड़की ने उत्तर दिया, "गुसलखाने में गिर गई थी, वहीं से मिली है।"

गांधीजी बोले, "देख, पिन तो यह है। तू तनिक से डर के कारण एक पिन के लिए झूठ बोली ! अगर तूने गलती स्वीकार कर ली होती तो नम्रता सीखती। ऐसी छोटी-सी वस्तु के लिए झूठ बोलने की आदत कई बार बहुत बड़ा रूप ले लेती है।"

सत्य ही मेरा राजमार्ग था

एक बार श्री घनश्यामदास बिड़ला गांधीजी के साथ बात-चीत कर रहे थे। सहसा बछड़े की चर्चा छिड़ गई। गांधीजी ने एक मरणासन्न बछड़े की व्यथा को न सहकर उसे तुरन्त मरण-दान देने का प्रबन्ध किया था। बिड़लाजी बोले, "महात्माजी, श्रीकृष्ण ने भी बछड़ा मारा था, किन्तु वह तो आलंकारिक जमाना था। इसलिए बछड़े का वत्सासुर हो गया, लेकिन इस बीसवीं शताब्दी में तो लोग सीधी-सादी भाषा में बोलते हैं। इसलिए आपके इस काम ने काफी हलचल पैदा कर दी है। आपने बहुत-से साहस के काम किये हैं, किन्तु इसमें तो हद हो गई है। मुझे तो मालूम होता है कि आपने इससे अधिक साहस का काम अपने जीवन में कोई और नहीं किया।"

गांधीजी बोले, "ऐसी क्या बात है ? मैंने तो सबकुछ सहज भाव से ही किया है।"

बिड़लाजी ने पूछा, "अच्छा, आपने ऐसा कौन-सा काम किया है, जिसे साहस की दृष्टि से आप अपने जीवन में ऊंचे-से-ऊंचा स्थान दे सकें।"

गांधीजी बोले, "इस दृष्टि से तो मैंने कभी विचार नहीं किया। किन्तु मैं समझता हूं कि बारडोली सत्याग्रह स्थगित करके मैंने बहुत बड़े साहस का परिचय दिया है। चौबीस घंटे पहले सरकार को चुनौती देकर ललकारना और फिर अचानक

सत्याग्रह स्थगित कर देना, यह अपने-आपको बेहद हास्यास्पद बनाना था। किन्तु मैं तनिक भी नहीं हिचका। जो सत्य था, वही मेरा राजमार्ग था। इसीलिए मेरी हँसी होगी, इस विचार ने मुझे कभी भयभीत नहीं किया। मेरे जीवन के बड़े साहसिक कामों में यह एक था, ऐसा मैं मानता हूं।"

बिड़लाजी ने कहा, "सविनय अवज्ञा आन्दोलन अचानक बन्द करना पड़ा, इससे आपको क्लेश नहीं हुआ ?"

गांधीजी ने दृढ़ता से उत्तर दिया, "किंचित भी नहीं।"

: २५ :

मैं तुम्हारे पैरों पड़ता हूं...

गांधीजी उन दिनों उत्तर भारत की यात्रा पर थे। १९२१ का प्रारम्भ था। जनता में उमड़ती हुई भावनाएं चरम सीमा पर थीं। हर स्टेशन पर अपार भीड़ इकट्ठी हो जाती थी। बड़ी-बड़ी लाठियों और मशालोंवाले किसान आकर कान फोड़नेवाली आवाजें लगाते थे। गांधीजी के साथी उनसे शोर न करने की विनती करते। बहुत-से स्टेशनों पर उतरकर उनके पैर पड़ते। कुछ क्षण के लिए वे पीछे हट जाते, परन्तु फिर वही शोर मचने लगता। वे लोग डिब्बे में चढ़ आते। पुकारते, "महात्माजी कौन हैं ?"

भटनी स्टेशन पर तो हद हो गई। इन अप्रत्याशित आक्रमणों के कारण गाड़ी रात के १२ बजे वहां पहुंची। बार-बार प्रार्थना

करने पर भी लोग पटरी पर से नहीं हटे। कहने लगे, "जबतक दर्शन नहीं हो जाते तबतक गाड़ी को चलने ही नहीं देंगे।"

महादेवभाई ने बार-बार अनुनय-विनय की, पर वे नहीं हटे। फिर क्रोध में भरकर न कहने योग्य शब्द कहे, लेकिन उनपर कोई असर नहीं हुआ। बोले, "भगवान के दर्शन करने आये हैं, इसमें शर्म किस बात की!"

इन सब उपद्रवों के कारण गाड़ी बहुत देर में चली, लेकिन आगे कहीं भी तो शान्ति नहीं मिली। गांधीजी ज़रा भी न सो सके। आखिर डेढ़ बजे एक स्टेशन पर उठकर वह स्वयं भीड़ के सामने आये, विनती की, "मेहरबानी करके आप जाइये। इतनी रात गये क्यों तंग करते हैं!"

इसके उत्तर में जोरदार हर्षनाद हुआ। गांधीजी ने फिर विनती की। लेकिन कौन सुननेवाला था! तभी सहसा गांधीजी की सौम्य मूर्ति विकृत हो उठी। इतनी विकृत कि महादेवभाई कांप उठे। ऐसी क्रुद्ध दशा में उन्होंने गांधीजी को पहले कभी नहीं देखा था। गांधीजी ने अपना माथा पीटकर कहा, "तुम्हारे पैरों पड़ता हूं, भले बनकर यहां से हट जाओ।"

भीड़ अब भी नहीं हटी। लोगों की उद्धतत्ता की हद हो गई। गांधीजी ने तीन बार अपना माथा पीटा तब कहीं जाकर वे लोग शान्त हुए।

इसमें कौन-सा खलल पड़ जाता !

उन दिनों रांची में स्वराज्य-पक्ष की परिषद थी। एक दिन सवेरे के समय गांधीजी कई नेताओं के साथ मंच पर बैठे हुए बहुत ही आवश्यक राजनैतिक चर्चा में व्यस्त थे। उन्हींमें मीनू मसानी भी थे। उसी समय कोई व्यक्ति उनके (मसानी) नाम की चिट्ठी लेकर आया। चन्द्रशंकर शुक्ल ने, जो उस समय गांधीजी के साथ काम करते थे, वह चिट्ठी लेकर अपने पास रख ली।

आधे घंटे के बाद वह चर्चा समाप्त हुई। मसानी चले गये, तब कहीं जाकर शुक्ल ने वह चिट्ठी गांधीजी को दी। गांधीजी ने पूछा, "यह चिट्ठी कब आई थी।"

शुक्ल ने जवाब दिया, "करीब आधा घंटा हुआ होगा, लेकिन आप जरूरी बातें कर रहे थे, इसलिए उस समय नहीं दे सका।"

गांधीजी बोले, "दे क्यों नहीं सके? आते ही दे देनी चाहिए थी। इसमें कौन-सा खलल पड़ जाता? तुम जानते हो मसानी कौन है?"

चन्द्रशंकर शुक्ल नें उत्तर दिया, "नहीं।"

गांधीजी को बड़ा आश्चर्य हुआ। बोले, "इनके पिता से मेरा बहुत पुराना परिचय है। जाओ, उन्हें ढूंढ़ निकालो। उन्हें यहीं खाना खिलाना और यहीं ठहराना।"

हम सब पापी हैं

एक बार गांधी-सेवा-संघ के एक सम्मेलन में एक ऐसे दम्पति आये थे, जिन्होंने ब्रह्मचर्य का व्रत लिया था। दोनों अलग-अलग स्थानों पर रहते थे। पति कहीं रहकर काम करते थे, पत्नी किसी दूसरे स्थान पर पढ़ती थी। दोनों दो दिशाओं से आकर वहां मिल गये। मिलने में कोई भय नहीं होना चाहिए, लेकिन भय था भी। आखिर पति-पत्नी ही तो थे और इतने दिनों के बाद मिल रहे थे। परिणाम यह हुआ कि व्रत भंग हो गया।

हो गया सो हो गया, लेकिन संयोग की बात उसी दिन अपने प्रार्थना-प्रवचन में गांधीजी ने बड़े मार्मिक शब्दों में संयम और ब्रह्मचर्य का विवेचन किया। वह भाई भी उस सभा में उपस्थित थे। जैसे-जैसे वह उस विवेचन को सुनते गये, उनका मन उनको धिक्कारता गया। आखिर उनसे रहा नहीं गया। वह खड़े हो गये और हाथ जोड़कर बोले, "बापूजी, मैं पापी हूं। मुझसे एक पाप हो गया है।"

गांधीजी उस दम्पति के व्रत के बारे में जानते थे। क्या हो गया है, यह समझते हुए उन्हें देर न लगी। हाथ का इशारा करते हुए उन्होंने कहा, "बैठ जाओ, हम सब पापी हैं।"

आज तो मेरा मन पाप का बासा हो गया

अहमदाबाद में अखिल भारत कांग्रेस कमेटी की बैठक हो रही थी। उसमें कई महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास हो चुके थे। इनमें एक प्रस्ताव था मि० डे की राजनैतिक हत्या के संबंध में। दूसरा था अदालतों के बहिष्कार के संबंध में। उस समय देशबन्धु दास और मोतीलाल नेहरू ने 'स्वराज्य पार्टी' के नाम से एक नये दल की स्थापना की थी। उनका दल उन प्रस्तावों के विरुद्ध था। पहले प्रस्ताव पर जब उनकी हार हुई, तो देशबंधु दास और मोतीलाल नेहरू अपने साथियों-सहित बैठक से उठकर चले गये।

उस बैठक में गांधीजी बच्चों की तरह हिचकियां ले-लेकर रोए थे। एक मार्मिक दृश्य उपस्थित हो गया था। उसका असर सायंकालीन प्रार्थना के वातावरण पर भी पड़ा। मंच पर सभी नेता लोग गांधीजी के पास बैठे थे। उनमें मोतीलाल नेहरू भी थे। उनके चेहरे पर पश्चात्ताप की भावना थी। वह खोए-खोए से इधर-उधर देख रहे थे। ऐसा लगता था, जैसे उनको मानसिक आघात पहुंचा है और वह उसकी व्यथा को सह नहीं पा रहे हैं। उससे बचने के लिए उन्होंने सिगरेट निकाली। उसे सुलगाया और लम्बे-लम्बे कश खींचने लगे। उस समय गीता का पाठ चल रहा था। गांधीजी ने उनकी ओर देखा और फिर आंखें बंद कर लीं।

प्रार्थना समाप्त हुई। गांधीजी बोलने लगे, "आज तो मेरा मन पाप का बासा हो गया है। मोतीलाल तो मेरे सगे भाई के समान हैं। इनसे तो मुझे कभी पर्दा नहीं हुआ। मैं तो इनसे सबकुछ कह सकता हूं। अपने जी का रहस्य भी खोल सकता हूं। फिर भी अभी इन्होंने जो अपनी सिगरेट जलाई, उसे मैंने देखा, पर मैं देखकर चुप हो गया। मेरा फर्ज था कि मैं इनसे कहूं कि प्रार्थना में सिगरेट नहीं पी जा सकती है, पर मैं अपने मन को दबाकर बैठ गया। मन तो पाप को हजम नहीं कर सकता। फिर प्रार्थना में मन लगना कैसे सम्भव होता। मेरा मन साफ होता, तो मैं इनको सिगरेट बुझाने को अवश्य कहता, पर मेरे मन में आज खोट आ गया। मुझे ऐसा लगा कि मोतीलाल मुझसे रुष्ट हैं। वह प्रार्थना भी छोड़कर न चले जायं, ऐसा डर मुझे लगा। मोतीलाल तो मुझे प्यार करते हैं, सो मैं जानता हूं। फिर मुझे डर कैसा? डर तो पाप की परछांई को कहते हैं।"

गांधीजी बोल रहे थे कि मोतीलालजी की घिग्घी बंध गई। सिगरेट बिना बुझाए दूर फेंककर रूमाल से आंसू पोंछते हुए वह फफक-फफककर रोने लगे।

: २९ :

एक-एक झाड़ू अपने हाथ में ले लो

उड़ीसा में गांधीजी की पदयात्रा चल रही थी। एक दिन अगले पड़ाव पर जाने के लिए सब लोग अपना सामान बांधकर

तैयार खड़े थे कि चलने के समय जैसे ही एक कार्यकर्ता कांग्रेस का झण्डा लेकर आगे आये, गांधीजी ने उन्हें टोककर कहा, "यह हरिजन-यात्रा है। इसमें तो दूसरा ही झण्डा हमारे साथ चलना चाहिए।"

यह कहकर उन्होंने एन० आर० मलकानी और वियोगी हरि की ओर देखा। वे कुछ उत्तर दें, इससे पूर्व ही कमाण्डर के स्वर में उनको गांधीजी का आदेश मिला, "तुम दोनों एक-एक झाड़ू अपने हाथ में ले लो। वह हमारी स्वच्छता की प्रतीक होगी। यह सारा ही आन्दोलन हमारे बाहर और भीतर के कूड़े-कचरे को साफ करने का आन्दोलन है।"

उनके आदेश का तुरन्त पालन किया गया। मलकानी और वियोगी हरि एक-एक झाड़ू हाथ में लेकर महात्माजी की आज्ञा के अनुसार आगे-आगे चलने लगे।

: ३० :

कुछ भी हो, परन्तु माफी नहीं मांगी जायगी

सन् १९१९ के मार्च मास में जब 'यंग इण्डिया' के एक लेख के लिए गांधीजी और महादेवभाई पर हाई कोर्ट में मामला चला और उनपर अदालत की मान-हानि का आरोप लगाया गया, उस समय बहुत-से मित्रों ने गांधीजी से माफी मांग लेने की प्रार्थना की। श्री जिन्ना ने तर्क किया, "गांधीजी, इस बार आप

माफी मांग लीजिये। माफी नहीं मांगेंगे तो हम आपका बचाव नहीं कर सकेंगे। कानून की दृष्टि से आपने अपराध किया है। अदालत आपको सजा देने के लिए लाचार होगी। ऐसे ही मामले में इंग्लैण्ड में पार्लमिन्ट के सदस्यों को छः-छः महीने की सजा हो चुकी है। सरकार आपको किस बुनियाद पर छोड़ेगी ? न छोड़े तो हम कानून जाननेवाले सरकार को दोष नहीं दे सकते।"

गांधीजी ने सहज भाव से उत्तर दिया, "आपकी बात सही है। परन्तु माफी नहीं मांगी जायगी। मेरा कहना मानिये, सरकार मेरा कुछ भी नहीं कर सकती।"

श्री जिन्ना ने केस रिपोर्ट निकालकर कहा, "गांधीजी, आप गलत आग्रह कर रहे हैं।"

लेकिन गांधीजी इन तर्कों से विचलित होनेवाले नहीं थे। महादेवभाई का विश्वास था कि जहांतक बुद्धि का प्रश्न है, सरकार छोड़ेगी, यह आशा करना व्यर्थ था, परन्तु अन्तर से एक आवाज उठती थी कि इस बार सरकार उन्हें जेल नहीं भेजेगी।

दो दिन बाद मालूम हुआ कि सरकार ने कुछ भी नहीं किया। मामला खत्म हो गया।

आइन्दा मैं स्याही से लिखूंगा

महाबालेश्वर में एक दिन दोपहर को गांधीजी सो रहे थे। कुमारी बनमाला परीख उनके पैरों में घी मल रही थीं कि सहसा उन्होंने जोर से हाथ हिलाया, आंखें खोलीं और फिर मूंद लीं। जागने पर बनमाला ने पूछा, "यह सब क्या था?"

दोपहर को वह बोलते नहीं थे। पास रखे हुए एक कागज के टुकड़े पर उन्होंने लिखा कि उन्हें सपना आया था। वह सपना भी उन्होंने लिख दिया। वह कागज बहुत बारीक था। एक तरफ उसके स्याही से लिखा हुआ था और वह स्याही दूसरी तरफ फूट आई थी। उसपर गांधीजी ने पेंसिल से लिखा। बनमाला उसे पढ़ न सकी। वह चुपचाप वहां से चली गई और जब कुछ देर बाद लौटी तो उसके हाथ में एक मजबूत चौकोर कागज था। हाथ के इशारे से गांधीजी ने पूछा, "क्यों?"

बनमाला ने उत्तर दिया, "बापू, आप तो कागज की बचत करते हैं और हमारी आंखें फूटती हैं!"

बारीक कागज बनमाला के हाथ में था। गांधीजी ने उसको वापस मांगा। वनमाला बोली, "नहीं, मैं जो कागज लाई हूं, उसी पर लिखिये।"

लेकिन गांधीजी तुले थे कि वह बारीक कागज ही लेंगे। बड़ी अनिच्छा से बनमाला ने वह कागज उन्हें दे दिया। तब एक टुकड़े पर गांधीजी ने स्याही से लिखा, "मैं जानता हूं कि मुझे स्याही से

ही लिखना चाहिए, लेकिन इसके लिए यह कागज नहीं, मैं जिम्मेदार हूं। आइन्दा मैं स्याही से लिखूंगा, लेकिन यह कागज मैं अपने पास ही रखूंगा।"

बजमाला ने उत्तर दिया, "ऐसे कागज ठीक नहीं होते, बापू। मैं दूसरे अच्छे कागज दे दूंगी।"

न जाने कितने लोगों ने गांधीजी से यह बात कही होगी, लेकिन उससे उनके कार्यक्रम में कोई अन्तर नहीं पड़ा।

: ३२ :

शरीर के लिए जो आवश्यक है वह उसको देना धर्म है

श्री ब्रजकृष्ण चांदीवाला कुछ अस्वस्थ थे। गांधीजी ने उन्हें आश्रम में बुला भेजा और उनसे इलाज के संबंध में सभी बातें पूछीं। श्री चांदीवाला ने और बातों के साथ-साथ बताया कि उन्हें डाक्टर ने मलाई खाने की सलाह दी है। गांधीजी बोले, "यहां उसका प्रबन्ध हो जायगा। तुम एक कढ़ाई लाकर बलवन्त को दे दो। वह मलाई तैयार कर देगा।"

लेकिन ब्रजकृष्ण को आश्रम में मलाई खाना कुछ अच्छा नहीं लगा। इसलिए उन्होंने कढ़ाई लाकर नहीं दी। एक दिन बीत गया। गांधीजी ने बलवन्तसिंह को बुलाकर पूछा, "क्यों, ब्रजकृष्ण के लिए मलाई तैयार की?"

बलवन्तसिंह ने उत्तर दिया, "बापूजी, अभी तक कढ़ाई नहीं

आई है।"

गांधीजी ने उसी समय ब्रजकृष्ण को बुलाया और पूछा, "क्यों ब्रजकृष्ण, अभी तक कढ़ाई क्यों नहीं लाये ? और तुम्हारे लिए मलाई क्यों नहीं बनी ?"

ब्रजकृष्ण ने उत्तर दिया, "बापूजी, आश्रम में इतनी खटपट करने में संकोच होता है।"

गांधीजी ने कहा, "यह तुम्हारी मूर्खता है। शरीर के लिए जो आवश्यक है, वह उसको देना धर्म है। जाओ, अभी शहर जाओ और कढ़ाई लेकर आओ।"

बेचारे उसी समय बाजार गये और कढ़ाई लेकर आये। शाम हो आई थी। गांधीजी ने कहा, "सवेरे ब्रजकृष्ण को बीस तोला मलाई मिलनी ही चाहिए।"

उतनी मलाई तैयार करने में बलवन्तसिंह को रात में तीन-चार बार जागना पड़ा। सौभाग्य से सवेरे तक उतनी मलाई तैयार हो गई। गांधीजी यह देखकर बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने ब्रजकृष्ण को आदेश दिया कि वह उस मलाई को खायं।

यह सिलसिला बराबर चलता रहा।

लोकनायक अपने पर काबू पाये बिना कुछ नहीं कर सकता

उस दिन दरबारसाहब गोपालदास गांधीजी से मिलने के लिए आये। उनकी पत्नी भक्तिबहन उनसे भी पहले आ गई थीं। गांधीजी से वह पहली बार ही मिल रही थीं। गांधीजी बोले, "आपको मैंने पहले नहीं देखा। आपकी बातें बहुत सुनी हैं। उनमें बोरसद की ही नहीं, और भी बातें थीं।"

फिर बा की ओर मुड़कर बोले, "तेरा मुझपर कोई हुक्म चलता है? भक्तिबहन की तो दरबारसाहब पर सत्ता चलती है, परन्तु सुना है, एक बात में इनकी नहीं चलती।"

भक्तिबहन यह सब सुनकर शरमा गईं। महादेवभाई ने कहा, "दरबारसाहब बीड़ी को क्षम्य कुलक्षण मानते हैं।"

तभी आ गये दरबारसाहब। गांधीजी ने उनसे कहा, "आइये, आपने तो बोरसद को खूब सुशोभित किया। ऐसी जीत भारत में हमें एक भी नहीं मिली। आप न होते तो वल्लभभाई अकेले क्या कर सकते थे!"

दरबारसाहब ने कहा, "पण्ड्याजी और रविशंकरजी भी तो थे।"

बापू बोले, "हां, ये लोग तो पुराने जोगी हैं, परन्तु बोरसद में वे अकेले क्या कर सकते थे? आप थे तो ताल्लुके को तैयार कर सके, परन्तु आपके विरुद्ध शिकायत भी आई है। कहते हैं,

आपने दूसरों पर तो काबू पा लिया है, परन्तु अपने-आपपर बहुत थोड़ा काबू पाया है। लोकनायक अपने पर काबू पाये बिना कुछ नहीं कर सकता। आपने बीड़ी के मामले में भक्तिबहन को खूब सताया है। उपवास भी कराये हैं। यह बात सच है न? यह न समझना कि मुझसे अभी-अभी शिकायत की गई है। आपके बारे में यह शिकायत मुझे जेल में मिली थी। आपसे किसने कहा कि यह कुलक्षण क्षम्य है?"

दरबारसाहब लज्जित हुए, पर बोले, " 'नवजीवन' में ऐसा आया है।"

गांधीजी ने कहा, "मैंने चाय के लिए तो कहा है, परन्तु बीड़ी के लिए नहीं।"

दरबारसाहब बोले, "बीड़ी के लिए भी कहा है।"

गांधीजी ने कहा, "तब तो उस समय मेरी बुद्धि चरने चली गई होगी।"

दरबारसाहब ने सफाई पेश की, "मैंने तेंतीस-चौंतीस बार छोड़ी, लेकिन फिर शुरू कर दी। इसे छोड़ने का काम बड़ा कठिन है।"

गांधीजी ने कहा, "हां, बीड़ी छोड़ना बहुत कठिन काम है, शराब छोड़ने से भी। आप कभी मानेंगे कि मैं चोरी करूंगा? परन्तु जब मैं ग्यारह वर्ष का था तब मुझे बीड़ी के जले हुए टुकड़े पीने की आदत पड़ी। मगर इससे क्या तृप्ति होती है? इसलिए नौकर की जेब से पैसे चुराना शुरू कर दिया। अब यह नहीं लगता कि शराब पीने की आदत पड़ी होती तो मैं चोरी भी करता। परन्तु बीड़ी छोड़ने का सबसे बड़ा उदाहरण तो...भाई

का है। वह किसी समय खूब बीड़ी पीते थे। मित्रों ने उनसे कहा, आपके जैसे मनुष्य को बीड़ी पीना शोभा नहीं देता।"

"उन्होंने इस बात को अनुभव किया और उसी दिन से बीड़ी छोड़ दी। छोड़ी सो छोड़ी। बस एक बार निश्चय कर लेना चाहिए और सर्वथा त्याग कर देना चाहिए। आज इतनी पी लें, कल उससे कम पीवें, परसों उससे भी कम पीवें, इस तरह बीड़ी नहीं छूट सकती, परन्तु आपको मैंने भाषण सुनने के लिए नहीं बुलाया। मुझे तो ऐसा लगा कि आपको बधाई दे दूं। आपने बड़ा काम किया है। आप दोनों को मेरी ओर से खूब बधाई।"

: ३४ :

भगवान को भक्तों ने बिगाड़ा है

डांडी-यात्रा के अवसर पर गांधीजी जब आणन्द पहुंचे तो वह वहां की 'चरोतर एजूकेशन सोसायटी' में ठहरे। मौनदिवस होने के कारण वह वहां एक दिन अधिक ठहरे। रात को नीम के पेड़ोंवाले चौक में उनका बिस्तर लगाया गया। लोहे की पट्टी-वाले पलंग पर खादी की ताजी भरी हुई चौड़ी रिजाई बिछाई गयी। गांधीजी ने उसे देखा। बोले, "इतने चौड़े बिस्तर की क्या जरूरत है?"

और स्वयं अपने हाथों से उसकी दोहरी तह करके उसे फिर से बिछाया।

उनके पलंग के पास एक कमोड भी रख दिया गया था, जिससे उन्हें सवेरे तकलीफ न हो, लेकिन गांधीजी को यह अच्छा नहीं लगा। उन्होंने कहा, "इसे अपनी जगह से क्यों हटाया गया? इसे वहीं रखना चाहिए।"

कमोड को उसके स्थान पर पहुंचा दिया गया। फिर उन्होंने उसके भीतर देखा। वहां साबुन की टिकिया रखी हुई थी। वह बोले, "साबुन भीतर चाहिए या बाहर?"

साबुन भी बाहर रखा गया।

सबकुछ देखने के बाद ही वह सोने के लिए पलंग पर पहुंचे और सब भूलों को याद करते हुए बोले, "भगवान को भक्तों ने बिगाड़ा है।"

उसके बाद दो मिनट के भीतर ही वह गहरी नींद में सो गये।

: ३५ :

हुर्रे रामदास काका

प्रभुदास गांधी तब केवल छः वर्ष के थे। गांधीजी के साथ फीनिक्स आश्रम (दक्षिण अफ्रीका) में रहते थे। उन दिनों गांधीजी का यह नियम था कि प्रत्येक व्यक्ति के घर पर कुशल समाचार पूछने जाया करते थे। तब वह जालीदार कपड़े की आधी बांह की सफेद कमीज और सफेद पतलून पहनते थे। एक दिन प्रभुदास कुछ देर तो उस कमीज को देखते रहे, फिर उन्होंने

इधर-उधर देखा तो पाया कि रामदासकाका वहां नहीं हैं। रामदास गांधीजी के तीसरे बेटे का नाम था। उनको न पाकर प्रभुदास ने जोर-जोर से पुकारा, "लामदाशकाका, ओ लामदाश काका!"

गांधीजी ने तुरन्त उसे टोका, "लामदाश क्या कह रहा है? रामदास कह।"

प्रभुदास ने फिर कहा, "लामदाशकाका"

अब गांधीजी ने सब बच्चों को इकट्ठा किया। बोले, "बच्चो, बोलो, हिप-हिप हुर्रे।"

सबने मिलकर आवाज लगाई, "हिप-हिप हुर्रे।"

फीनिक्स की दिशाएं गूंज उठीं। पांच-सात बार बोलने के बाद गांधीजी प्रभुदास की ओर मुड़े। कहा, "बोलो हुर्रे।"

कई बार बोलने के बाद प्रभुदास ठीक बोलने लगा तो उन्होंने कहा, "अब बोलो, हुर्रे रामदासकाका।"

प्रभुदास बोला, "हुर्रे रामदासकाका।"

प्रभुदास का उच्चारण शुद्ध हो गया, लेकिन जबतक 'ल' मिटकर पूरी तरह शुद्ध 'र' नहीं बन गया, तबतक प्रभुदास को मुक्ति नहीं मिली।

मुझे मदद की जरूरत नहीं है

उन दिनों टाइफाइड ने बड़े जोर-शोर से आश्रम पर आक्रमण किया। मीराबहन बहुत सख्त बीमार हुईं, नाणावटी तो इतने बीमार हुए कि बेहोश हो गये। उन लोगों ने अस्पताल जाने की बात कही, लेकिन बापू का वही उत्तर था, "मेरे पास कितना भी काम हो तो भी तुम्हारी सेवा में किसी प्रकार की कमी नहीं आयगी। हां, तुमको मेरा विश्वास न हो तो मैं तुमको रोकूंगा नहीं।"

सारी दुनिया का काम करते हुए भी गांधीजी बीमारों की पूरी सेवा-शुश्रूषा करते रहे। तभी चिमनलालभाई को भी टाइफाइड हो गया। वह सबसे खतरनाक था। स्वयं गांधीजी को शक हो गया कि चिमनलालभाई शायद नहीं बचेंगे। उनकी पत्नी श्रीमती शकरीबहन अहमदाबाद में थीं। किसीने गांधीजी से कहा, "उनको बुला लिया जाय।"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "मुझे मदद की जरूरत नहीं है और न उसका आना मैं यहां ठीक समझता हूं। हां, चिमनलाल चाहें तो जरूर बुला सकते हैं।"

चिमनलालभाई ने इंकार कर दिया। बापू ही जब बीमारों की मां, पत्नी और डाक्टर सबकुछ बन जाते थे तो किसीको बुलाने की आवश्यकता ही क्या रहती थी! सम्बन्धी जन आकर मोह ही तो पैदा करते हैं, लेकिन चिमनलालभाई की अवस्था

बड़ी ही चिन्ताजनक थी। एक रात गांधीजी ने बलवन्तसिंह से पहरा देने के लिए कहा। बोले, "हो सकता है, आज रात को ही चिमनलाल चला जाय। हम सबको सावधान रहना चाहिए। हमारी सेवा में किसी प्रकार की कमी न रहे, तो हमारे लिए बस है।"

जहां गांधीजी की इतनी सावधानी हो, वहां रोग कैसे ठहर सकता है! कुछ दिन के बाद ही चिमनलालभाई की तबीयत सुधर गई और टाइफाइड का आक्रमण, जो आश्रम पर हुआ था, व्यर्थ हो गया।

: ३७ :

पैर छूने की इकन्नी और लूंगा

हरिजन-कोष के लिए रुपया इकट्ठा करते हुए गांधीजी देहरादून पहुंचे। वहां स्त्रियों ने अलग सभा करके दो हजार रुपये की थैली भेंट की। उसके बाद महात्माजी का भाषण हुआ और भाषण के बाद वह बोले, "मैं तो जेवर भी ले सकता हूं। दरिद्रनारायण के लिए अंगूठी भी ले सकता हूं। इसके लिए मर्दों से क्या पूछना! वह तो स्त्रीधन है और यहां आने की भी जरूरत नहीं! मैं वहीं आकर ले लूंगा।"

वह मंच से स्त्रियों के अथाह समुद्र में उतर पड़े। दोनों हाथों की अंजलि बनाकर भिखारी के रूप में घूमने लगे। शोर मच गया, "अरे महात्मा, यह ले, यह ले।"

ऐसे धक्के पड़े कि महात्माजी कभी-कभी तो धरती पर पैर भी न टिका पाते थे; लेकिन वह थे कि हँस रहे थे! एक स्त्री अपनी दो अंगुलियों में एक इकन्नी दबाये हाथ ऊपर किये चिल्ला रही थी, "ओ महात्मा, ले, मेरी यह इकन्नीं भी लेता जा।"

महात्माजी ने स्त्रियों के सिर के ऊपर से अपनी अंजलि बढ़ाते हुए कहा, "ला।"

उसने इकन्नी अंजलि में डाल दी, तो महात्माजी बोले, "अभी तो पैर भी छुएगी न ?"

स्त्री बोली, "हां, छूऊंगी।"

"तो फिर पैर छूने की इकन्नी और लूंगा।"

ताना-सा देते हुए उस गांव की औरत ने कहा, "किराए पै छुआवे क्या पैर भी तू ?"

गांधीजी ने कहा, "हां।"

भरे जलसे में श्रीचरणों का सौदा हो गया। उसने एक इकन्नी और दी और महात्माजी ने पैर आगे बढ़ा दिया।

: ३८ :

मैं जल्दी ही प्रस्तावना लिखकर भेजूंगा

श्री जेठालाल गांधी ने आचार्य कृपालानी के लेखों का एक संग्रह तैयार किया था। उनकी बड़ी इच्छा थी कि उस संग्रह की प्रस्तावना गांधीजी लिखें। उन्होंने अपना यह प्रस्ताव उनके

सामने रखा और गांधीजी ने तुरन्त इसे स्वीकार कर लिया।

लेकिन विधि का विधान, ठीक समय पर गांधीजी अस्वस्थ हो गये। श्री महादेव देसाई ने श्री जेठालाल गांधी को लिखा कि ऐसी स्थिति में उनसे प्रस्तावना लिखवाना उचित नहीं होगा। उन्हें इस मेहनत से बचा लिया जाय।

श्री जेठालाल ने उसीके अनुसार गांधीजी को पत्र लिख दिया, लेकिन उधर से तुरन्त उत्तर आया, "नहीं, मैं जल्दी ही प्रस्तावना लिखकर भेजूंगा।"

और कुछ ही दिन बाद उन्होंने न केवल प्रस्तावना लिखकर भेज दी, बल्कि दूसरी और भी सूचनाएं लिख भेजीं, जिन्हें पुस्तक में शामिल करना आवश्यक था।

: ३६ :

ये रुपये हरिजनों की सेवा के लिए हैं

उन दिनों गांधीजी जुहू में निवास कर रहे थे। एक दिन सोलह-सत्रह वर्ष की एक बालिका बरसात में भीगती हुई वहां आई और अपनी डायरी में गांधीजी से हस्ताक्षर करने की प्रार्थना की। उन्होंने हस्ताक्षर करने के लिए कलम उठाई ही थी कि कोई भाई बोल उठे, "बापू, इसने पांच रुपये नहीं दिये!"

बस, कलम रुक गई। बोले, "हस्ताक्षर के लिए तुम्हें पांच रुपये तो देने ही चाहिए।"

बालिका ने उत्तर दिया, "मेरी स्थिति ऐसी नहीं है कि मैं आपको पांच रुपये दे सकूं।"

गांधीजी ने बिना हिचकिचाए कहा, "तो मैं दस्तखत भी नहीं दे सकता।"

बालिका बोली, "लेकिन बापू, मैं पैसे कहां से लाऊं? मैं तो गरीब विद्यार्थिन हूं।"

गांधीजी ने उसे समझाने का प्रयत्न करते हुए कहा, "तू गरीब है, तो दस्तखत के बिना भी काम चला सकती है। जानती है कि पांच रुपये हरिजन फण्ड में जमा होते हैं।"

बालिका बोली, "लेकिन मैं तो दस्तखत लेकर ही रहूंगी। मैं गरीब हूं तो क्या इसीलिए मुझे आपके दस्तखत नहीं मिलेंगे? मैं धनवान नहीं हूं, यह क्या मेरा गुनाह है?"

गांधीजी ने उपाय सुझाया, "तुझे अपने मां-बाप से पैसे लेने चाहिए या फिर दस्तखतों का मोह छोड़ना चाहिए। तुझे जानना चाहिए कि ये पांच रुपये तुझसे भी अधिक गरीब और दुखी हरिजनों की सेवा के लिए हैं।"

बालिका अब भी अडिग थी। बोली, "मेरे मां-बाप की ऐसी स्थिति नहीं है कि वे पांच रुपये दे सकें। आप मुझे दस्तखतों का मोह छोड़ने को कह रहे हैं, लेकिन मैं दस्तखत लिये बिना नहीं जा सकती।"

आसपास कई व्यक्ति खड़े हुए थे। उन्हींमें से एक बोल उठे, "बहन, अपने कानों की बालियां निकालकर बापूजी को दे दो।"

बालिका तुरंत तैयार हो गई, लेकिन वे तो आठ आने की

भी नहीं थीं। सब लोग समझ गये कि यह बालिका सचमुच गरीब है। आखिर एक बन्धु ने सुझाव दिया, "बापूजी, आप इसे दस्तखत दे दीजिये। इसकी ओर से पांच रुपये मैं दिये देता हूं। जब इसके पास हो जायंगे तो यह मुझे लौटा जायगी।"

बालिका कृतज्ञता से भर उठी और तुरन्त बोली, "जरूर दे दूंगी। आमदनी होने पर सबसे पहले आपके रुपये देने का वचन देती हूं।"

गांधीजी ने उसी क्षण उसकी डायरी पर हस्ताक्षर कर दिये। अपनी जीत की खुशी से मुस्कराती हुई वह बालिका जिस तरह बरसात में भीगती हुई आई थी उसी तरह भीगती हुई वापस चली गई।

: ४० :

वाह रे बहादुर ! उस्तरे से इतना डर गये

दक्षिण अफ्रीका में गांधीजी के साथ उनके भतीजे श्री छगनलाल गांधी भी थे। एक बार उनके छोटे पुत्र कृष्णदास के गले में एक गांठ हो गई। पीड़ा के कारण वह बालक बोल नहीं सकता था। उसका काटा जाना आवश्यक था। डाक्टर वहां था नहीं। तब गांधीजी ने स्वयं ही उस गांठ को चीरने का निश्चय किया। लेकिन अभी वह पूरी तरह पकी नहीं थी। उन्होंने कहा, "रात को आटे की पुलटिस बांधो और सवेरे गर्म पानी, उस्तरा आदि

तैयार रखो। उसके बाद मुझे बुलवा लेना।"

सवेरे जब उनके पास सन्देशा पहुंचा तब वह एक खेत में घुटने तक ऊंची घास को फावड़े से साफ करने में व्यस्त थे। उस समय ऐसा लगता था कि अब घास खोदने के सिवा दुनिया में उनका कोई और लक्ष्य नहीं है। बुलाने के लिए प्रभुदास आये थे। कई क्षण तक वह गांधीजी को काम करते देखते खड़े रहे। कुछ देर बाद गांधीजी ने उन्हें देखा और पूछा, "कृष्ण के लिए बुलाने आये हो न ? चलो, मैं आया।"

उन्होंने फावड़ा अलग रख दिया। पतलून पर लगी हुई मिट्टी झाड़ी और लड़कों से कहा, "देखो, अब तुम लोगों की बातें बन्द होनी चाहिए। मेरे सामने तुम काफी खेल चुके। मेरे पीछे तुम्हें आलस्य नहीं करना। जबतक मैं लौटूं, काम पूरा हो जाना चाहिए। बड़ों के सामने आलस्य करो, वह निभा लिया जा सकता है, परन्तु उनके पीठ-पीछे आलस्य करके उनको धोखा नहीं देना चाहिए।"

यह कहकर वह कृष्णदास के घर पहुंचे। लेकिन जब पट्टी खोली तो देखते क्या हैं कि वह गांठ घुलकर बैठ गई है। सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। गांधीजी हँसते-हँसते बोले, "वाह रे बहादुर! उस्तरे से इतना डर गये कि गांठ को ही छिपा दिया! यह कोई बहादुरी की बात नहीं है।"

और पांच-सात मिनट इस प्रकार हास-परिहास करने के बाद वह वापस खेत पर लौट गये।

मेरे लिए तुमने कितने व्यक्तियों का समय बिगाड़ा

आश्रम के संयुक्त रसोईघर में दोसौ स्त्री-पुरुष भोजन करते थे। ठीक समय पर रसोईघर की घण्टी बजती। जिस तरह भोजन करनेवालों के लिए घंटी बजती थी उसी तरह परोसनेवालों के लिए भी घंटी बजती थी। इसके बाद जो भी व्यक्ति आता उसे बाहर बैठकर दूसरी पंक्ति की राह देखनी होती थी। गांधीजी स्वयं प्रतिदिन समय पर ही आते थे। एक दिन ऐसा हुआ कि घंटी बजने का समय हो गया, लेकिन वह आते दिखाई नहीं दिये। एक क्षण बाद घंटी बजानेवाले सज्जन ने देखा कि दूर पर गांधीजी आ रहे हैं। वह उनके आने तक रुका रहा। वह पास आ गये तभी उसने घंटी बजाई।

गांधीजी को जब यह मालूम हुआ कि उनके कारण परोसने में एक मिनट की देर हो गई है, तो उन्होंने घंटी बजानेवाले से कहा, "मेरे लिए तुमने कितने व्यक्तियों का समय बिगाड़ा। अगर मैं देर से आऊं तो मुझे भी बाहर बैठना चाहिए, लेकिन घंटी बजाने में जरा भी देर नहीं होनी चाहिए।"

तो खादी पहनोगी न ?

टबरा गांव नर्मदा नदी के किनारे पर बसा हुआ है। गांधीजी जब वहां पहुंचे तो एक पेड़ के नीचे मुट्ठीभर आदमी शान्ति से बैठे हुए थे। गांधीजी उनके साथ बातें करने लगे। बहनों की ओर देखकर बोले, "क्यों बहनो, मैंने आपका कोई अपराध किया है, जो आप खादी नहीं पहनतीं ?"

एक बहन हँसकर बोली, "नहीं-नहीं, अपराध आप क्यों करेंगे ? हमने ही किया है।"

गांधीजी ने पूछा, "तो खादी कब पहनोगी ?"

उत्तर में आह भरकर बुढ़िया बोली, "स्मशान में लकड़ियां पहुंच गई हैं तब क्या पहनें ?"

गांधीजी ने कहा, "अरे, ऐसा क्यों कहती हैं ! मरना तो सभीको है। खादी पहनें और मरें। हँसते-हँसते मर जाना क्या बुरा है ? खादी नहीं पहनोगी तो मन-की-मन में रह जायगी कि अरे, मैंने खादी नहीं पहनी।"

इस बार उस बुढ़िया का मुख सहज स्मित से दीप्त हो उठा। बोली, "अच्छा, तब तो पहनूंगी।"

और चर्चाएं हुईं। जाने से पहले गांधीजी फिर उस बुढ़िया मां की तरफ मुड़े और बोले, "अच्छा, तो खादी पहनोगी न ? तुम सबकी तरफ से वचन देती हो न ?"

बुढ़िया ने उत्तर दिया, "हां, वचन तो दे दूं, परन्तु मोटी

खादी के बजाय पतली मिले और छपवा दें तो ज्यादा ठीक रहे। और छोटी लड़कियां क्या पहनें ! उन्हें तो शादी करके ससुराल जाना है।"

गांधीजी ने हँसकर कहा, "ठीक है, ठीक है, जबतक तुम बारीक न कातो तबतक बारीक खादी कैसे मिल सकती है ? तुम कातकर दो तो बुनवा भी दूं और छपवा भी दूं। और तुम शादी करनेवाली लड़कियों की बातें करती हो, तो एक बात पूछता हूं। तुम हरीभाई अमीन को जानती हो ?"

बुढ़िया ने उत्तर दिया, "हां, ये तो महात्मा हैं।"

गांधीजी बोले, "महात्मा से भी बड़े हैं। देखो, कुछ दिन पहले इनकी भतीजी की शादी हुई थी। ये नियमित कातते हैं। बारीक सूत कातकर और उसकी दो धोतियां बनवाकर उन्होंने वर को दीं। ये खुद मोटी खादी पहनते हैं। सब वरवाले भी मोटी खादी पहनते हैं। इनके पास बहुत रुपया है। फिर भी ये मोटी खादी किसलिए पहनते हैं ? देश के लिए। तुम जैसी कातने लगें, इसलिए। अच्छा, अब बताओ कातोगी और खादी पहनोगी न ?"

सब एक साथ बोल उठीं, "हांजी, हांजी।"

अपने दोषों को देखो

दक्षिण अफ्रीका में गांधीजी ने अनेक प्रयोग किये। आश्रम-जीवन बिताना भी उन्होंने वहीं सीखा। उनके आश्रमों में सब-कुछ अपने हाथ से करना पड़ता था। पाठशाला भी चलती थी। स्वयं ही पढ़ाते और स्वयं ही परीक्षा भी लेते।

उन्हीं दिनों की बात है। एक दिन सब विद्यार्थी पाठशाला में बैठे गणित के अध्यापक की चर्चा कर रहे थे। एक लड़का बोला, "भाई, गणित बापूजी ही पढ़ावें तो अच्छा। छगनलाल-भाई अच्छी तरह समझा नहीं पाते। कठिन-से-कठिन सवाल को भी बापूजी अच्छी तरह समझा देते हैं।"

संयोग की बात कि गांधीजी उस समय दरवाजे के बाहर ही खड़े हुए थे। उन्होंने सबकुछ सुन लिया। धीरे-धीरे वह विद्यार्थियों के सामने आये। उनको देखते ही सब सहम गये। उस दिन गांधीजी ने जो-कुछ पढ़ाना था वह नहीं पढ़ाया, बल्कि बड़ी गम्भीरता से उनसे कहने लगे, "तुम लोगों की यह कैसी उद्दण्डता है! आज तुमको मेरे मुकाबले में छगनलालभाई अयोग्य शिक्षक लगते हैं तो कल गोखले महाराज की तुलना में मैं अयोग्य लगूंगा। तुमको अपनी पढ़ाई से मतलब है या अपने शिक्षक को योग्यता के नम्बर देने से? जो विद्यार्थी अपने शिक्षक की निन्दा करता है वह चाहे कितना ही बुद्धिमान क्यों न हो, उसकी सारी पढ़ाई शून्य ही रह जायगी। जिस विद्यार्थी में विनम्रता नहीं है,

वह कुछ भी ग्रहण नहीं कर सकता। जो नम्र है, शिक्षक उसे थोड़ा भी दे तो वह उसे बहुत बनाकर ग्रहण करेगा। तुम्हें अगर दोष देखने हैं तो अपने दोषों को देखो। शिक्षकों का दोष देखो, यह बिल्कुल असह्य है। गणित के शिक्षक छगनलाल ही रहेंगे। मेरे पास जिस तरह चित्त लगाकर तुम सवाल करते हो, उसी तरह छगनलाल के पास भी पूरे ध्यान से करने चाहिए। मन में उनके प्रति आदर रखना चाहिए।"

उसके बाद विद्यार्थियों ने फिर कभी टीका-टिप्पणी नहीं की।

: ४४ :

ये तीनों मेरे गुरु हैं

गांधीजी की मेज पर तीन बन्दरों का एक खिलौना रहता था। एक व्यक्ति ने एक दिन उनसे पूछा, "बापू, यह खिलौना यहां मेज पर क्यों रखा है?"

गम्भीरता से उन्होंने उत्तर दिया, "ये तीनों मेरे गुरु हैं।"

फिर कुछ क्षण रुककर बोले, "आज मुझे ठीक-ठीक तो याद नहीं, लेकिन कई साल पहले यह खिलौना एक चीनी ने महादेव को दिया था। महादेव के पास से यह मेरे पास आ गया। बहुत-सी श्रेष्ठ और महत्वपूर्ण निधियां अब भी चीनी संस्कृति में जीवित हैं। यह मामूली खिलौना एक बड़ी बात कहता है, जो दैनिक जीवन के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। पहला बन्दर जिसने

अपना मुंह ढांप रखा है, कहता है—कभी असत्य न बोलो, किसी की निन्दा न करो। दूसरा बन्दर जिसने अपनी आंखें बन्द कर रखी हैं, कहता है—अपनी आंखों से कोई खराबी न देखो।"

फिर वह रुककर धीरे-से बोले, "जब मैं घूमने जाता हूं तब मेरा हाथ किसीके कंधे पर होता है। मैं उससे कह देता हूं कि देखना, मेरी आंखें बन्द हैं। मुझे संभालकर ले जाना और इस बात से मुझे शान्ति और बल मिलता है।"

गम्भीरता से उन्होंने आगे कहा, "तीसरा बन्दर हमें सिखाता है कि हम किसीकी बुराई या निन्दा न सुनें। कितना बड़ा उपदेश है यह! कान का दुरुपयोग आदमी के मन का चैन छीन लेता है और हृदय को अक्षम्य अपराधी बना देता है। हम सभीको जीवन में ऐसा अनुभव तो होता ही है।"

गांधीजी उस समय खाना खा रहे थे। खाने के बाद उन्होंने हाथ धोए और फिर कहा, "इस खिलौने को मैं कलामय वस्तु कहता हूं। इसका केवल बाहर का रूप ही सुन्दर नहीं है। इसका आन्तरिक भाव भी मनुष्य-जाति के लिए लाभदायक है। जो कला मानव-जाति को ऊंचा नहीं उठा सकती, जो कला मनुष्यता का कल्याण नहीं कर सकती, उसे कला नहीं कहा जा सकता। कला तो मन को पवित्र करके आत्मा को उज्ज्वल बनाती है। इन बन्दरों को मैं ज्ञानपूर्वक गुरु कहता हूं और जहां जाता हूं अपने साथ ले जाता हूं। मुझसे पग-पग पर ये अपनी बात कहते रहते हैं।"

चर्खे के बिना देश का उद्धार नहीं

फरीदपुर में होनेवाली बंगाल प्रान्तीय परिषद् के अध्यक्ष देशबन्धु चित्तरंजन दास थे। इस अवसर पर गांधीजी भी वहां गये। विद्यार्थियों ने उनकी सेवा में मान-पत्र अर्पण करने का निश्चय किया। जिस समय वे लोग गांधीजी को बुलाने के लिए आये, वह कात रहे थे। हँसते-हँसते बोले, "विद्यार्थी यहां नहीं आ सकते। मुझे मान-पत्र लेने के लिए जाना ही चाहिए। यदि वे यहां आ सकें तो मैं मान-पत्र के उत्तर में भाषण तो दूंगा ही, उसके अतिरिक्त कुछ और भी दूंगा।"

उनका यह संदेशा लेकर आचार्य कृपालानी विद्यार्थियों के पास गये और बोले, "देखो, गांधीजी को कातते हुए लाने की अपेक्षा कातते हुए देखना क्या अच्छा नहीं होगा? गांधीजी सिपाही हैं। तुम लोग भी सिपाहियों की तरह कवायद करते हुए दो-दो तीन-तीन की कतार में वहां आ जाओ। इस टीन की चादरोंवाली नाट्यशाला में तो झुलसा डालनेवाली गर्मी है। इसकी अपेक्षा खुली हवा में बैठना अच्छा है।"

विद्यार्थियों और उनके नेता सुहरावर्दी ने इस सुझाव को तुरन्त मान लिया और 'वन्देमातरम्' पुकारते हुए वे गांधीजी के डेरे पर आ गये। गांधीजी को जगाया गया। दोपहर के दो बजे विद्यार्थी बिना आनाकानी किये चले आये, यह देखकर वह बहुत खुश हुए। वह तुरन्त चर्खा लेकर चबूतरे पर जा बैठे। उनके

सामने सहन में विद्यार्थी बैठे। सुहरावर्दी ने मान-पत्र पढ़ा। कातते-कातते उसका उत्तर देते हुए गांधीजी बोले, "तुमने मान-पत्र दिया, इसके लिए मैं तुम्हारा आभार मानता हूं। इससे अधिक आभार इस बात का मानता हूं कि तुमने यहांतक आने का कष्ट किया। मैंने तुम्हें जो संदेशा भेजा था, वह तो आधा मज़ाक में ही था। लेकिन मुझे तुम्हें यह समझाना भी था कि कातना भारत के उद्धार के लिए अनिवार्य धर्म है। जैसे-जैसे पूनी से धागा निकलता जाता है वैसे-वैसे मैं भारत के भाग्य की डोरी खींचता जा रहा हूं। मेरा विश्वास दृढ़ होता जा रहा है कि चर्खे के बिना देश का उद्धार नहीं! इसलिए मैं चाहता हूं कि जो समय गप्पें लगाने में और खेलने-कूदने में विताते हो, उसमें से केवल आधा घंटा निकालकर कातने के लिए देते रहो।"

: ४६ :

समय पूरा हो चुका है

समय-असमय विश्वभर के अनेक पत्रकार गांधीजी से मिलने का प्रयत्न किया करते थे। उस दिन वह समय किसी पत्रकार से मिलने के लिए नहीं था, लेकिन एक जर्मन पत्रकार आ पहुंचे और महादेवभाई के पीछे पड़ गये। बोले, "किसी भी तरह हो, मुझे गांधीजी से मिला दीजिए। केवल दो मिनट के लिए ही मिलूंगा।"

पहले तो महादेवभाई टालते रहे, लेकिन फिर पिघल गये और गांधीजी के पास आकर बोले, "एक जर्मन पत्रकार केवल दो मिनट के लिए आना चाहता है। उसका बड़ा आग्रह है। दो मिनट दे दीजिये।"

गांधीजी ने कहा, "ले आओ।"

पत्रकार आया। शिष्टाचार की बातें करने में एक मिनट निकल गया। फिर वह अपनी बात कहने के लिए भूमिका बांधने लगा। दूसरा मिनट भी समाप्त हो गया। गांधीजी ने तुरन्त अपनी घड़ी उसके सामने कर दी और इशारे से कहा, "समय पूरा हो चुका है, आप जा सकते हैं।"

उस दिन जर्मन पत्रकार को सचमुच निराश ही लौट जाना पड़ा।

: ४७ :

असत्याचरण से बचना चाहिए

दक्षिण अफ्रीका में जब गांधीजी आश्रम बनाकर रहते थे तो अखबार भी निकालते थे। उसका सब काम आश्रम के निवासी अपने हाथ से ही करते थे। विद्यार्थी भी काम में मदद करते थे।

आमतौर से छापाखाने में विद्यार्थियों के काम के दो घंटे रहते थे, परन्तु शुक्रवार के दिन दोपहर तक और आवश्यकता होने पर शाम को देर तक काम करना पड़ता था, क्योंकि शनि-

वार को सवेरे ही अखबार डाक में डालना होता था। उस दिन लोग इतने खुश होकर काम करते थे मानो कोई उत्सव हो। अलग-अलग टोलियों में होड़ लग जाती कि देखें, कौन पहले छपे अखबारों को मोड़ लेता है। कटाईवाले जीतते हैं या लोहे के तार से टांके लगाने की मशीनवाले, या बंडल बांधनेवाले। इस होड़ को गांधीजी सदा प्रोत्साहित करते रहते थे। ऐसा करने से काम बहुत जल्दी समाप्त हो जाता था।

एक बार क्या हुआ कि जिस टोली में प्रभुदास थे वह इस होड़ में हार गई। जोरों की तालियां बजीं। उस टोली ने बड़ी तत्परता से काम किया था, फिर भी तालियां बज गईं, यह बात उनको अच्छी नहीं लगी। उसके सब सदस्य खिसिया गये। लेकिन थोड़ी देर बाद पता चला कि उस टोली के साथ छल किया गया था। अखबारों की एक बड़ी गड्डी उनसे छिपाकर रख दी गई थी। वही अन्त में गांधीजी के सामने पेश की गई। प्रभुदास को बड़ा क्रोध आया। रोते-रोते वह गांधीजी के पास पहुंचे और यह कहानी कह-सुनाई।

शाम की प्रार्थना के बाद गांधीजी ने इस बात की चर्चा की। जिन लड़कों ने ऐसा किया था उन्हें डांटा, कहा, "खेल में या होड़ में असत्याचरण से बचना चाहिए।"

प्रभुदास को बड़ी सान्त्वना मिली। लेकिन कई दिन बाद जब प्रार्थना के उपरान्त गांधीजी रामायण के अर्थ समझा रहे थे तो चुगली करने का प्रसंग आया। तब गांधीजी ने "चुगली नहीं करनी चाहिए" यह समझाते हुए कहा, "लड़कों के आपस के खेल में कहीं गड़बड़ हो जाय तो चुगलखोर उसी तरह दौड़कर

शिकायत करने आयगा जैसे उस दिन शुक्रवार को प्रभुदास आया था।"

उसके बाद प्रभुदास फिर कभी चुगली करने की साहस नहीं कर सके।

: ४८ :

बहुतों को स्वेच्छा से भिखारी बनना ही पड़ता है

बंगाल के सुप्रसिद्ध गांधीवादी नेता डा० प्रफुल्लचन्द्र घोष मलिकंदा के रहनेवाले हैं। मलिकंदा खादी का बड़ा केन्द्र रहा है। गांधीजी बंगाल की यात्रा करते हुए वहां पहुंचे। उन्होंने बारीक खादी देखकर आश्चर्य प्रकट किया। माखनलाल सेन, जो कभी अराजकतावादियों के सरदार थे, कातने में भी सर्वश्रेष्ठ थे। गांधीजी यह सब देखकर बहुत प्रसन्न हुए। वह वापस लौट रहे थे कि सहसा उन्होंने डा० घोष की ओर देखकर पूछा, "आपका घर तो देखा ही नहीं। उसे देखे बिना कैसे काम चल सकता है?"

फिर कुछ झाड़ियां पार करके डा० घोष के घर आये। बीस फुट लम्बा और दस फुट चौड़ा छोटा-सा घर देखकर, जिसमें डा० घोष के माता-पिता और भाई-बहनों का बड़ा परिवार रहता था, गांधीजी ने पूछा, "इस घर में आप उठते-बैठते हैं?"

डा० घोष ने उत्तर दिया, "जीहां।"

"सोते भी इसीमें हैं? पढ़ाई भी इसीमें करते हैं?"

"जीहां।"

डा० घोष इस गांव में पैदा हुए। कलकत्ता जाकर डी० एस-सी० की उपाधि ली, फिर पांचसौ रुपये मासिक वेतन पर टकसाल में नौकर हो गये। लेकिन जैसे ही असहयोग आन्दोलन आरम्भ हुआ, वह नौकरी छोड़कर उस दल में भर्ती हो गये। उनकी एक बहन इस यात्रा में गांधीजी के साथ थी। वह बहुत बोलती थी। गांधीजी ने प्रफुल्लबाबू से पूछा, "अपनी बहन को कहां पढ़ाते हो?"

प्रफुल्लबाबू ने उत्तर दिया, "भगिनी निवेदिता की कन्याशाला कलकत्ता में।"

"खर्च कहां से जुटाते हो?"

"पन्द्रह रुपये खर्च होता है। वह मेरा मित्र देता है। मैंने तो जब नौकरी छोड़ी तब मेरे पास डेढ़सौ रुपये थे। उसीसे बहन की शिक्षा शुरू की थी।"

गांधीजी बोले, "ऐसा ही होता है। मुझे तुमपर ज़रा भी दया नहीं आ रही। जहां सारे समाज की पुनर्रचना करनी होती है, वहां बहुतों को स्वेच्छा से भिखारी बनना ही पड़ता है।"

ऐश-आराम से जीवन बिताना पाप है

गांधीजी जहां भी जाते थे, पत्र-प्रतिनिधि वहीं पहुंच जाते थे। नोआखाली-प्रवास के दिनों में भी उन्होंने गांधीजी का पीछा नहीं छोड़ा। वे उनसे नाना प्रकार के प्रश्न करते रहते थे। एक दिन एक प्रतिनिधि ने पूछा, "गांधीजी, आपने सन् १६२५ में कहा था कि मैं शासन विधान में यह धारा रखूंगा कि स्वतंत्र भारत में मत देने का अधिकार उसीको होगा जो शारीरिक परिश्रम से राज्य की कुछ-न-कुछ सेवा कर सके। क्या आप इस बात पर अब भी कायम हैं?"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "इस बात पर तो मैं मरते दम तक कायम रहूंगा। भगवान ने मनुष्य को बनाया है। इसलिए प्रत्येक मनुष्य का धर्म है कि वह काम किये बिना खाना न खाये। जिसके पास रुपये हैं, वह रुपये दे और सबके साथ हाथ-पैर चलाकर खाये। बुद्धि से रुपया बटोरकर भोग-विलास के साधन पैदा करना और ऐश-आराम से जीवन बिताना पाप है।"

जो जेल गये हैं उनके लिए क्या करोगे ?

एक दिन गांधीजी बच्चों को किसी गीत का अर्थ समझा रहे थे। अन्त में बोले, " 'जन्मभूमि-व्रत' का अर्थ जानते हो न ?"

लेकिन बच्चे उसका अर्थ नहीं बता सके। तब उन्होंने ही कहा, "इस व्रत के पालन करने का मतलब है अपने दुखी भाई-बहनों की सेवा करना। जो दुखी हों, उनके लिए कुछ-न-कुछ दुःख स्वयं उठाना। क्यों, अब तो समझ गये न ?"

बच्चों ने उत्तर दिया, "जीहां, समझ गये।"

गांधीजी बोले, "अब कहो, जो जेल गये हैं उनके लिए तुम क्या करोगे ? मां-बाप, भाई-बहन, ये लोग जेल चले जायं तब क्या हमें मौज उड़ानी चाहिए ? उन लोगों को जेल में जब अच्छा खाना न मिले, घी-दूध न मिले तो हम लोग मिष्ठान्न कैसे खा सकते हैं ? मैं तुम सबसे इतना ही चाहता हूं कि तुम सभी बालक अलोना खाना शुरू कर दो। हमारे बगीचे में ढेर-के-ढेर फल होते हैं। इसके अलावा हम रोटी ले सकते हैं। जेल में तो उन लोगों को इतना भी नसीब नहीं होता। बोलो, तुम्हें मंजूर है ?"

बच्चे सहसा इसके लिए कैसे तैयार हो सकते थे ? तब उन्होंने उन्हें अलग-अलग समझाया। तरह-तरह के फलों और मुरब्बों के नाम लिये, परन्तु जब देखा कि बच्चे नमक छोड़ने में संकोच करते हैं तो कहा, "अच्छा, मिर्च, मसालेदार, चटपटा

शाक, कढ़ी, खिचड़ी आदि नमकीन भोजन हर रविवार को मिल जाया करेगा। सप्ताह में छः दिन ही अलोना रहेगा। अब तो ठीक है ?"

रविवार का अपवाद मिल जाने के कारण सब बच्चे उत्साह में आ गये और उन्होंने छः दिन अलोना लेना स्वीकार कर लिया। लेकिन तभी गांधीजी ने एक और नया प्रस्ताव उनके सामने रखा। देवदास से कहा, "क्यों देवा, कल सुबह से चार बजे उठा दूं न ? अब हमें कठोर जीवन बिताने का आरम्भ कर देना चाहिए।"

देवदास तत्काल इसका जवाब न दे सके, तो गांधीजी ने प्रभुदास पर जोर डाला। हिचकिचाते हुए उन्होंने उत्तर दिया, "उठूंगा तो सही, पर नियमपूर्वक नहीं उठ पाऊंगा।"

गांधीजी ने बच्चों को फिर समझाया, "अगर तुम लोग चार बजे उठना भी स्वीकार नहीं करना चाहते तो सबके साथ जेल जाने के लिए कैसे तैयार हो गये थे ? जेल में चार बजे उठने के मुकाबले कहीं अधिक कठिनाइयां उठानी पड़तीं।"

इस अन्तिम वाक्य ने बच्चों को विवश कर दिया और उन्होंने गांधीजी के इस प्रस्ताव को भी स्वीकार कर लिया।

भगवान का भजन कर

ढाका में एक रोज एक पचहत्तर वर्ष का बूढ़ा गांधीजी के सामने पेश किया गया। वह तीस-चालीस मील से चलकर आया था और दर्शनों के लिए रो रहा था। सामने आते ही उसने तुरन्त अपने मांथे पर हाथ रखने की मांग की। गांधीजी ने सोचा, ऐसा करने से वह जल्दी चला जायगा। इसलिए बिना एक शब्द बोले उन्होंने उसके सिर पर हाथ रख दिया।

परन्तु हाथ का रखना था कि वह आवेश में आ गया और गांधीजी के पैरों में लोट-पोट होकर रोने लगा। उसके गले में गांधीजी और बा की एक तस्वीर लटकी हुई थी। आवेश का ज्वार जब ज़रा ठंडा पड़ा तब उसने कहा, "मैं नामशूद्र हूं। दस वर्ष पहले मेरे पैरों को लकवा मार गया था। बिस्तर से उठा नहीं जाता था। भगवान से मौत मांगता था। अनेक दवाइयां कीं, कुछ लाभ नहीं हुआ। तब आपका नाम लिया और आज मैं चलने योग्य हो गया हूं।"

यह कहकर वह फिर गांधीजी के चरणों में लोटने लगा। गांधीजी ने कहा, "भाई, भगवान का भजन कर। उन्होंने ही तुझे अच्छा किया है। गांधी में किसीको अच्छा करने की ताकत नहीं है।"

परन्तु वह किसकी सुननेवाला था! अंत में गांधीजी ने उससे कहा, "भाई, अब तुम यहां से चले जाओ और अगर मेरा

कहना मानते हो तो गले से यह चित्र उतार दो।"

यह सुनकर उसने वह चित्र तुरन्त गले से निकाल लिया और वहां से चला गया। उसने सोचा होगा, जिन गांधी महाराज ने उसका लकवा ठीक किया है और जिनका चित्र वह गले में डाले फिरता है, शायद वह गांधी यह नहीं है।

: ५२ :

राम-रटन्त दिल से होना चाहिए

१९४७ में देश जब साम्प्रदायिकता की आग में झुलस रहा था, उस समय गांधीजी बंगाल, बिहार, दिल्ली, उत्तर प्रदेश सब कहीं उस आग को बुझाते घूम रहे थे। मार्च में वह बिहार में थे। मनु गांधी उनके साथ थीं। सहसा वह अस्वस्थ हो गई। नाक से खून जाने लगा। एक दिन डाक्टर गांधीजी की जांच करने के लिए आये। खान अब्दुल गफ्फार खां उनके साथ थे। डाक्टर ने उनकी भी जांच की। उसके बाद मनुबहन की बारी आई। उसकी जांच गांधीजी ने अपनी देखरेख में कराई। फिर सब लोग घूमने के लिए चले गये। वहां से लौटने पर मालिश के समय उन्होंने मनु से कहा, "जब डाक्टर तुम्हारी जांच कर रहे थे, तुमने मुझे वहां रहने के लिए मना कर दिया था। शायद तुम्हारे मन में यह खयाल था कि इतने समय में मैं अपना कुछ और काम कर लूंगा, परन्तु जितने महत्व का मेरा दूसरा काम है, उतने ही महत्व का काम तुम्हारी देखरेख का भी है। मुझपर इस समय मां का कर्त्तव्य

है। तुम्हारी नाक में से गर्मी का मौसम न होने पर भी असाधारण खून गिरता है, उससे तुम्हें जो नुकसान हो रहा है, वह तुम बिना संकोच के डाक्टर से कह सकोगी, इसका मुझे अभी तक विश्वास नहीं था। तुम्हें शर्मीलापन और संकोच छोड़ना चाहिए।"

गांधीजी मनु को यह सब समझा ही रहे थे कि उसकी नाक से एकदम खून की धार बह निकली। उन्होंने तुरन्त उसे बिठा दिया। प्रेम से उसकी पीठ सहलाने लगे। यह देखकर मनु की आंखों में आंसू भर आये। उसे गांधीजी से सेवा करानी पड़ी, इसका उसे बहुत दुःख था। गांधीजी जैसे सबकुछ समझ गये। वात्सल्य-भरे स्वर में बोले, "ऐसा लगता है कि मैं कुछ कहूं, उसका भी तुम्हारे दिमाग़ पर असर होता है। तुम बहुत भावुक हो। इसलिए मस्तिष्क के दबाव के कारण नाक से खून बह सकता है। तमाम शारीरिक रोगों का आधार हमारी मानसिक स्थिति पर है। इतनी बात तुम समझ लोगी तो यह नकसीर का रोग अपने-आप चला जायगा, इसमें मुझे ज़रा भी शंका नहीं। तुम्हारे चेहरे से लगता है कि जो कुछ मैं कहता हूं, उसे तुम गम्भीरतापूर्वक कुछ भार रूप मानकर मस्तिष्क को थकाती हो। ठीक है, गम्भीरता से प्रौढ़ता आयगी, परन्तु वह कब होनी चाहिए और कब नहीं, इसका तुम्हें विचार करना चाहिए। कभी-कभी १७ वर्ष की होने पर भी तुम ७० वर्ष की लगती हो। यह दृश्य देखना मुझे ज़रा भी अच्छा नहीं लगता। इस उम्र में तो हँसना, खेलना-कूदना, खाना-पीना और कमर कसकर काम करना चाहिए। दूसरे के काम में तुम्हें आलस्य नहीं आता, परन्तु अपने प्रति तुम आलस्य रखती हो। यह बिलकुल ठीक नहीं है। विवेकपूर्ण, व्यावहारिक

गाम्भीर्य जब तुममें आयगा तब कितने ही जटिल प्रश्न हों तो भी चेहरा और मन स्मितपूर्वक उनका जवाब देंगे। ऐसी मुस्कराहट के दो अर्थ होते हैं, एक तो बेहयाई की मुस्कराहट और दूसरी अपनी भूल समझकर दुबारा वह भूल न करने के आनन्द की मुस्कराहट।"

इसके बाद मनु को वात्सल्यपूर्वक छाती से लगाकर गांधीजी बोले, "अब अगर तुम अपने मन को दृढ़ कर लोगी तो आगे कभी नकसीर नहीं फूटेगी। रामरटन्त दिल से होनी चाहिए। मन की प्रफुल्लता के साथ यह मुख्य शर्त जरूर होनी चाहिए।"

: ५३ :

चर्खे के लिए जितने नाच नचाएं नाचने को तैयार हूं

बंगाल के प्रवास में गांधीजी मेमनसिंह गये और वहां के बड़े जमींदार के बहुत आग्रह पर उन्हींके पास ठहरे थे। खादी से उन्हें बड़ा प्रेम था। बंगाल में बहुत बातों में जो रस, सुरुचि और औचित्य मालूम होता है वह भी यहां देखने में आया।

बहुत-से जमींदार गांधीजी से मिलने आये। उन सबसे खादी के संबंध में खूब बातें हुईं, लेकिन उन दिनों बरसात बहुत हो रही थी। इसलिए आम सभा नहीं हो सकी और स्वयं गांधीजी को भी सर्दी लग जाने के कारण ज्वर-सा हो गया। इसलिए यह निश्चय किया गया कि जिला बोर्ड का मान-पत्र बंगले में ही

दिया जाय, परन्तु प्रश्न उठा कि लोगों से कैसे मिला जायगा ?

महाराजा ने सुझाव दिया, "आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं है। आप बरामदे में एक सोफे पर लेटे रहें और लोग एक दरवाजे से घुसकर दूसरे दरवाजे से चले जायं।"

गांधीजी ने पूछा, "इतनी बरसात में लोग आये हैं ?"

पता लगा, हजारों लोग छतरी-सहित और बिना छतरी के बाहर खड़े हैं। अब तो गांधीजी ने महाराजा का सुझाव मान लिया। सोफा बरामदे में रखा गया। गांधीजी अपने सामने चर्खा रखकर उसपर बैठे। उस दिन दोपहर के तीन बजे से शाम के छः बजे तक हजारों व्यक्ति गांधीजी के दर्शन करते हुए उनके सामने से गुजरे। कुछ चबूतरे की सीढ़ियां चढ़कर चर्खे का स्पर्श करते थे। कुछ सोफे को छू लेते थे, क्योंकि वे जानते थे कि गांधीजी की तबीयत ठीक नहीं है। कुछ समय तक गांधीजी कातते रहे, फिर लेटे रहे। हजारों की भीड़, बरसात की झड़ी, आराम क्या मिलता ? शाम को शरीर टूट रहा था। महाराजा ने कहा, "आपको बड़ी तकलीफ हुई।"

गांधीजी बोले, "तकलीफ तो सचमुच हुई, परन्तु मैं तो चर्खे के लिए जितने नाच नचाए उतने ही नाचने को तैयार हूं। इतना करने पर भी लोग चर्खे और खादी के बारे में मेरी बात मानते हों, तो भले ही ऐसा हो।"

शरीर को स्वस्थ रखने के लिए इतना भोजन काफी है

हिन्दी के सुप्रसिद्ध पत्रकार और लेखक ठाकुर श्रीनाथसिंह सन् १९३७ में गांधीजी से मिलने के लिए वर्धा गये थे। तब गांधीजी मगनवाड़ी में रहते थे। वहां संतरों का एक विशाल बगीचा था। ठाकुरसाहब उसे देखकर बहुत प्रसन्न हुए। सोचा, संतरे खूब खाने को मिलेंगे। लेकिन गांधीजी ने कहा, "संतरे खाने के लिए नहीं, बिक्री के लिए हैं। जमनालाल बजाज ने यह बाग मुझे जनता की सेवा के लिए दिया है, मौज उड़ाने के लिए नहीं।"

इसपर ठाकुरसाहब ने भोजन के संबंध में अनेक प्रश्न किये। उनका कौतूहल देखकर गांधीजी ने उन्हें अपने साथ भोजन के लिए आमंत्रित किया।

उस दिन पुरुषोत्तमदास टण्डन, एक जापानी और दो अमरीकी सज्जन भी भोजन पर आमंत्रित थे। गोबर से स्वच्छ किये फर्श पर सब लोग खाना खाने बैठे। समय पर लड़कियों ने सबके सामने एक-एक थाली और दो-दो कटोरियां लाकर रखीं। एक कटोरी में मट्ठा था, दूसरी में आलू-शकरकन्द का साग। नीम की चटनी और ज़रा-ज़रा-सा गुड़ भी थाली में रखा हुआ था। गांधीजी बोले, "हम गरीब लोग अपने मेहमानों को इससे अधिक क्या खिला सकते हैं! जो बढ़िया भोजन खानेवाले

हैं, वे तो जमनालालु के यहां ठहरते हैं, लेकिन मैं मानता हूं कि शरीर को स्वस्थ रखने के लिए इतना भोजन काफी है।"

कस्तूरबा रोटी परोसने के लिए बाहर आईं। बासी रोटियां भी थीं, लेकिन वे मेहमानों को नहीं दी गईं। श्रीनाथसिंह ने कहा, "बापूजी, हम तो अखबारों में पढ़ते हैं कि आप शहद, सन्तरे और बकरी का दूध आदि लेते हैं।"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "यहां आश्रम में नहीं। जब दौरे पर होता हूं तो लोग प्रेमवश ऐसी चीजें दे देते हैं। उनको न खाऊं या खराब करूं तो उनका मन दुखेगा, पर यहां आश्रम में तो जबान पर काबू रखना पड़ता है।"

: ५५ :

मैं इसको शिकायत नहीं करता

गांधीजी शान्तिनिकेतन पहुंचे तो उनका भावभीना स्वागत किया गया। दूसरे दिन सवेरे ही वह बड़ो दा अर्थात् श्री द्विजेन्द्रनाथ टैगोर के दर्शन करने के लिए गये। वह बहुत वृद्ध थे, लेकिन जब देखो, तब नित्य नवीन लगते थे। फूलों का एक हार लेकर वह एक बड़ी कुर्सी पर बैठे थे। गांधीजी ने झुककर प्रणाम किया और बड़ो दा ने हार उनके गले में डाल दिया। उस समय उनके आनन्द और उल्लास का पार नहीं था। गांधीजी ने कहा, "यहां आने की बहुत समय से इच्छा थी, परन्तु आजतक आ नहीं सका। अब आप जब कहेंगे तब आ जाऊंगा।"

बडो दा का जी इतना भरा हुआ था कि वह जैसे-तैसे इतना ही कह सके, "मेरा जी भरा हुआ है। मुझसे बोला नहीं जाता।"

गांधीजी ने कहा, "परन्तु मैं जानता हूं, आप क्या कहना चाहते हैं?"

बड़ो दा बोले, "आपकी विजय के बारे में मुझे शंका नहीं है। मैं जानता हूं, आपका वज्र जैसा हृदय किसी बाधा से डिगेगा नहीं। मैं तो इतना कमजोर हूं..."

गांधीजी बोले, "शरीर से, आत्मा से नहीं। अरे, शरीर से भी नहीं।"

बड़ो दा हँस पड़े। कहा, "आज ऐसा लगता है, जैसे मेरा नया जन्म हुआ है।"

गांधीजी बोले, "हां, मैंने सुना है, आप बार-बार ऐसा कहते हैं।"

बड़ो दा अब 'यंग इण्डिया' की बातें करने लगे। बोले, "आपसे लोग चाहे जैसे सवाल पूछते हैं तो भी आप उनके जवाब देते हैं। जैसे एक भाई ने पूछा, 'आप संन्यासी जैसे हैं। आपसे ऐसा काम कैसे होता है? यह सब अंग्रेजी शिक्षा का परिणाम है।'

गांधीजी ने उत्तर दिया, "मैं तो बेवकूफी से भरे प्रश्नों से भी लाभ उठाता हूं। कभी-कभी तो ऐसा होता है कि ऐसे प्रश्न पूछे जाते हैं, जिन पर मैं कभी न लिखता। उन प्रश्नों के कारण मुझे लिखने का मौका मिल जाता है।"

बड़ो दा बोले, "लेकिन हमेशा जवाब देना तो मुश्किल हो जाता है।"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "मैं इसकी शिकायत नहीं करता। यह काम तो मैंने अपने-आप सिर पर ले लिया है।"

: ५६ :

आपकी योग्यता के संबंध में निर्णय करना मेरा काम है

ऐतिहासिक डांडी-यात्रा के समय जे० सी० कुमारप्पा की लेखमाला 'राजस्व और हमारी गरीबी' प्रकाशित हो रही थी। गांधीजी की बड़ी इच्छा थी कि उसे पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया जाय। कुमारप्पा चाहते थे कि उसका प्राक्कथन गांधीजी लिखें। इस संबंध में चर्चा करने के लिए गांधीजी ने उन्हें कराड़ी में बुला भेजा। जाते समय कुमारप्पा ने अपने नियम के अनुसार प्राक्कथन स्वयं ही तैयार कर लिया और वहां पहुंचकर उसकी टाइप की हुई एक प्रति हस्ताक्षर के लिए उनके सामने रखी। गांधीजी मुस्कराए। बोले, "मेरा प्राक्कथन मेरा ही लिखा हुआ होगा, कुमारप्पा का नहीं।"

इसके बाद वह बोले, "मैंने आपको इसलिए नहीं बुलाया, बल्कि यह जानने के लिए बुलाया है कि क्या आप मेरी गिरफ्तारी के बाद 'यंग इण्डिया' के लिए नियमित रूप से लिखा करेंगे? उसका प्रबन्ध महादेवभाई के हाथ में चला जायगा। मेरी इच्छा

है कि आप उनकी सहायता करें।"

कुमारप्पा ने जवाब दिया, "गांधी दर्शनशास्त्र से मैं सर्वथा अनभिज्ञ हूं। इसके अतिरिक्त 'यंग इंडिया' का क्या स्वरूप है, संपादक-पद कैसे सुशोभित किया जाता है, यह भी मैं नहीं जानता। हां, धूलभरी खाता-बही जांचने का काम अलबत्ता इससे कहीं अच्छी तरह कर सकता हूं। इस प्रकार का कोई काम हो तो उसे करने में मुझे बहुत खुशी होगी। लेखन-कार्य से तो मुझे बरी ही किया जाय।"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "लेखक-विषयक आपकी योग्यता के विषय में निर्णय करना पत्र-संपादक के नाते मेरा काम है, न कि आपका। इसीलिए मैं आपको अपने पत्र में लिखने के लिए निमंत्रित करता हूं। प्रत्येक लेख के अन्त में लेखक का नाम प्रकाशित करने की हमारी प्रथा रही है। अब यदि आपका लेख रद्दी हुआ तो पाठक कहेंगे कि महात्मा गांधी के पत्र में कूड़ा-करकट भरा रहता है। किन्तु यदि आपने प्रशंसा के योग्य कोई वस्तु दी तो उसका सारा श्रेय गांधीजी के पत्र में लिखनेवाले कुमारप्पा को ही मिलेगा।"

रात की थकावट भी तो उतरनी चाहिए न !

उन दिनों गांधीजी संयुक्त प्रान्त (वर्तमान उत्तर प्रदेश) की यात्रा पर थे। महादेवभाई तो सदा उनके साथ ही रहते थे। गांधीजी की तरह उन्हें भी चलती गाड़ी में लिखने का बहुत अच्छा अभ्यास हो गया था। एक दिन बहुत काम था। रात में देर तक वह लिखते रहे और उसे पूरा करके ही सो पाये। ऐसी स्थिति में सवेरे जल्दी उठना उनके लिए संभव नहीं हो सका। वह काफी देर से उठे और पाया कि गांधीजी पहले से ही वेटिंग रूम में जाकर चाय, डबलरोटी और मक्खन आदि ले आये हैं।

गांधीजी चाय नहीं पीते थे। वह उसके कट्टर विरोधी थे, लेकिन वह यह भी जानते थे कि महादेवभाई चाय पीते हैं, इसी-लिए वह नाश्ता लेकर उनके जागने की राह देख रहे थे। महादेव-भाई बड़े लज्जित हुए। वह पहली बार ही यह जान सके कि गांधीजी को उनके चाय पीने का भेद मालूम हो गया है, लेकिन गांधीजी ने तो मीठी-मीठी बातें करके उनका सारा संकोच दूर कर दिया और कहा, "रात की थकावट भी उतरनी चाहिए न !"

वह एक इंच भी नहीं हटेगा

एक दिन गांधीजी फीनिक्स से डरबन जा रहे थे। प्रभुदास गांधी भी उनके साथ थे। डरबन पहुंचकर वे लोग सीधे बन्दरगाह पर गये। पोलक उसी दिन भारत से लौटनेवाले थे। उनके स्वागत के लिए ही ये वहां गये थे। और भी बहुत-से भारतवासी वहां इकट्ठे हुए थे। स्टीमर को बन्दरगाह में प्रवेश मिल गया था, परन्तु किनारे लगने में कुछ देर थी। इसलिए गांधीजी दूसरे नेताओं के साथ एक बड़े गोदाम की छाया में खड़े बातें कर रहे थे। इसी बीच प्रभुदास उनसे अलग होकर अपने पिताजी के साथ वहां पहुंच गये, जहां स्टीमर लगनेवाला था।

धीरे-धीरे स्टीमर आकर किनारे लग गया। डेक पर पोलक दिखाई दिये। प्रभुदास के पिता उनसे बातें करने लगे। उसी समय एक अंग्रेज युवक, जो शायद बन्दरगाह का कोई कर्मचारी था, वहां आया और इन लोगों के तथा स्टीमर के बीच में जो संकरी जगह थी उसमें से होकर दूसरी ओर निकल गया। जाते-जाते उसने बड़ी उद्दण्डता के साथ प्रभुदास के पिता छगनलाल गांधी से कहा, "चलो, हटो यहां से।"

उसे निकलने के लिए जगह चाहिए, यह समझकर छगनलाल थोड़ा पीछे हट गये। लेकिन दूसरे ही क्षण वह गोरा युवक फिर वहां आया। बोला, "चलो, ह...ट जाओ।"

छगनलाल इस बार टस-से-मस न हुए और वहीं खड़े-खड़े

पोलक से बातें करते रहे। अब तो उस युवक का पारा चढ़ गया। गरजकर बोला, "अबे, सुनता क्यों नहीं ? इस सीढ़ी के पास से हटने के लिए तुझसे ही कह रहा हूं। हट, क्यों नहीं जाता ? हट इधर से।"

इतना कहकर वह छगनलाल को धक्का देने के लिए आगे बढ़ा। तभी सहसा गांधीजी और दूसरे लोगों का ध्यान उस ओर गया। वह युवक जितनी तेजी से बोला था, उससे दुगने ऊंचे स्वर में गांधीजी ने डांट लगाई, "वह एक इंच भी नहीं हटेगा।"

आकाश गूंज उठा। वह युवक चकित होकर गांधीजी की ओर मुड़ा। क्रोध से वह पागल हो उठा था। पास जाकर बोला, "क्यों नहीं हटेगा ? उसे हटना ही पड़ेगा। जहाज पर कुछ गड़-बड़ करनी है क्या ?"

गांधीजी का पुण्य-प्रकोप और भी प्रज्वलित हो उठा। तीव्र स्वर में बोले, "नहीं-नहीं, वह एक इंच भी नहीं हटेगा। तुम क्या करना चाहते हो ?"

संघर्ष बढ़ सकता था। लेकिन कुछ बड़े अंग्रेज अफसर वहां आ गये। उस युवक को समझाते हुए उन्होंने कहा, "यह तो गांधी हैं। मामूली कुली नहीं है। इससे तुम क्यों झगड़ रहे हो ?" यह और इसके साथी ऐसे नहीं हैं, जो स्टीमर पर कुछ गड़बड़ी करें।"

वे उस युवक को वहां से ले गये।"

हठपूर्वक उपवास करके यदि आप मर जायंगे...

चांदा जिले के हरिजन डिस्ट्रिक्ट बोर्ड में सीट चाहते थे, लेकिन वह उनको मिल नहीं रही थी। वे गांधीजी से मिलने आये। गांधीजी का काम करने का अपना ढंग था। वह उन्हें न्याय दिलाना तो चाहते थे, लेकिन कार्यकर्ताओं से पूछताछ कर और सब बातों की छानबीन कर लेने के बाद।

हरिजन भाई तत्काल न्याय चाहते थे। गांधीजी को यह बात ठीक नहीं लगी। तब उन हरिजन भाइयों ने उन्हींके विरुद्ध सत्याग्रह कर दिया और आश्रम के द्वार पर ही उपवास करने लगे। गांधीजी ने उनसे कहा, "आप लोग द्वार पर बैठे हैं। इससे आपको तकलीफ होती है। अन्दर आश्रम में बैठें तो कैसा हो! मैं आपको मकान देता हूं।"

उन्होंने उनके लिए उचित व्यवस्था कर दी। सब आश्रम-वासियों को आदेश दिया कि इन उपवास करनेवालों को किसी प्रकार का कष्ट न हो। उनमें स्त्रियां भी थीं। वे लोग समझते थे कि स्त्रियों के उपवास से गांधीजी घबरा जायंगे और हमको सीट दिला देंगे।

लेकिन गांधीजी हिमालय की तरह अटल रहे। उन्होंने कहा, "उचित रीति से जितना मैं कर सकता था, उतना किया। इस प्रकार हठपूर्वक उपवास करके यदि आप मर जायंगे तो भी मैं

परवा नहीं करूंगा।"

वह प्रतिदिन सुबह-शाम उनके पास जाते। बड़े प्रेम से उनसे बातें करते। उनको किसी चीज की आवश्यकता होती तो आश्रम से सहायता करने के लिए कह देते। उन्होंने उनके साथ ऐसा बर्ताव किया, जिससे कोई यह नहीं कह सकता था कि वे उनके विरोधी हैं। लेकिन वह झुके नहीं। आखिर हरिजन भाइयों ने अपनी हार स्वीकार की और उपवास बन्द करके चले गये।

: ६० :

तुम्हें उपवास नहीं करना चाहिए

एक बार मजदूरों की हड़ताल के प्रश्न को लेकर गांधीजी ने उपवास करने का निश्चय किया। उनके इस निश्चय से उनके साथी बहुत व्याकुल हो उठे। महादेव देसाई, अनुसूयाबहन और काकासाहेब कालेलकर ने तो इस बात की घोषणा कर दी कि वे भी गांधीजी का अनुसरण करेंगे।

सबसे पहले महादेवभाई गांधीजी के पास पहुंचे। बहुत देर तक दोनों विचार-विमर्श करते रहे। गांधीजी ने महादेवभाई को समझाने की बहुत कोशिश की, लेकिन वह अडिग रहे। तब सहसा गांधीजी कठोर हो उठे। बोले, "महादेव, मैं भी जानता हूं कि तुम्हारा धर्म क्या है? तुम्हें उपवास नहीं करना चाहिए। अगर तुम मेरी बात नहीं मानोगे तो मैं तुम्हारा मुंह नहीं देखूंगा।"

अब तो महादेवभाई की चिन्ता का कोई पार नहीं था। दुखी मन वह काकासाहब के पास आये। बोले, "बापू अगर मेरा मुंह नहीं देखेंगे तो मैं जिन्दा कैसे रहूंगा ?"

काकासाहब ने उत्तर दिया, "बापू तो हमारी अन्तरात्मा की तरह हैं। अगर वह खाने को कहते हैं तो हमें खाना ही चाहिए। यह हमारी परीक्षा का अवसर है।"

उसी दिन शाम की प्रार्थना के बाद गांधीजी ने कहा, "अगर तुम लोग मेरे साथ उपवास करोगे तो मेरी शक्ति बढ़ने की बजाय घटेगी। दिन-रात मुझे तुम लोगों की चिन्ता सताती रहेगी। तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम खा-पीकर मुझे रचनात्मक कार्यों में सहयोग दो। अगर तुम्हें किसी दिन मिष्टान्न बनाकर खाने का अवकाश हो तो वह भी तुम्हें खाना चाहिए। मेरे साथी भी मेरे साथ अनशन करेंगे तो मेरा सब कार्यक्रम रुक जायगा और मैं स्वयं अनशन न कर सकूंगा।"

: ६१ :

मैंने तो अपना कर्त्तव्य पालन किया है

एक बार गांधीजी रेल से कहीं जा रहे थे। तबतक वह महात्मा नहीं बने थे। दक्षिण अफ्रीका में रंग-भेद के विरुद्ध सत्याग्रह चला रहे थे। बीच में भारत आये थे। उसी समय की बात है।

उनके डिब्बे में एक ऐसा व्यक्ति बैठा था, जो बार-बार फर्श पर थूक रहा था। गांधीजी ने उससे कुछ नहीं कहा। कागज के

टुकड़े से थूक को पोंछकर फर्श को साफ कर दिया। उस व्यक्ति ने यह सब देखा, समझा कि यह सफाई-पसन्द आदमी मुझे नीचा दिखाना चाहता है। बस, उसने फिर थूक दिया। गांधीजी ने पहले की तरह फिर पोंछ दिया। अब तो वह व्यक्ति बार-बार थूकने लगा, लेकिन गांधीजी तनिक भी विचलित नहीं हुए। जैसे ही वह थूकता, वह बिना बोले फर्श को साफ कर देते।

अन्त में स्टेशन आ गया। उस थूकनेवाले व्यक्ति ने पाया कि प्लेटफार्म पर जनता की अपार भीड़ है और सारा वातावरण 'गांधीजी की जय' के नारों से गूंज रहा है। गाड़ी रुकते ही सब लोग उसी डिब्बे की ओर दौड़े। थूक पोंछनेवाले व्यक्ति ने हँसते-हँसते भीड़ का नमस्कार स्वीकार किया।

यह सब देखकर वह व्यक्ति तो हतप्रभ रह गया। वह बड़ा शर्मिन्दा हुआ। उसने लपककर गांधीजी के चरण पकड़ लिये। बार-बार क्षमा मांगने लगा। गांधीजी ने इतना ही कहा, "क्षमा की कोई बात नहीं। मैंने अपना कर्तव्य-पालन किया है। ऐसा अवसर आने पर तुम भी ऐसा ही करना।"

: ६२ :

चंचल आगे रहेगा और...

बंगाल में घूमते-घूमते गांधीजी चांदपुर आये। गांव की पाठशाला भी देखी और लड़कों से खूब मनोविनोद किया। बोले, "जो सबसे चंचल बालक है वह आगे आ जाय।"

पांच बालक सामने आये। गांधीजी बोले, "जो सबसे मूर्ख बालक है, वह आगे आये।"

लगभग सभी लड़के खड़े हो गये। इसपर गांधीजी ने कहा, "सबसे अधिक दुष्ट कौन है ?"

एक लड़का खड़ा हुआ। उससे गांधीजी ने पूछा, "तू बहुत दुष्ट कैसे है ?"

वह लड़का बोला, "मैं पेड़ पर चढ़ता हूं, दौड़ लगाता हूं।"

गांधीजी ने पूछा, "तू कातता कितना है ?"

उस लड़के ने उत्तर दिया, "मैं तो कातना जानता ही नहीं।"

गांधीजी बोले, "तो जा, चंचलता के लिए तू फेल होता है।"

और वह फिर मूर्ख बालकों की ओर मुड़े। बोले, "सबसे मूर्ख कौन है ?"

एक लड़का खड़ा हुआ। गांधीजी ने पूछा, "तुम मूर्ख कैसे हो।"

लड़के ने उत्तर दिया, "बहुत बुद्धि नहीं और बहुत पढ़ा भी नहीं।"

"कातते कैसा हो ?"

लड़का बोला, "कातता तो हूं, पर बहुत अच्छा नहीं कात सकता। एक घंटे में पचास-साठ गज ही कातता हूं।"

गांधीजी ने पूछा, "दौड़ते हो ?"

"जी, नहीं।"

गांधीजी ने पूछा, "कूदते-फांदते हो?"

"जीहां।"

"सिलाई आती है?"

"थोड़ी-थोड़ी।"

अब गांधीजी उन सब लड़कों को सम्बोधित करते हुए बोले, "तुम चंचल लड़के की मेरी व्याख्या सुनो। खूब खेले, दौड़े, नाचे, कूदे वह तो चंचल है ही, लेकिन सचमुच चंचल वह है जो खूब कातना जानता है और सब कामों में आगे बढ़ता है। जो खूब अंग्रेजी बोलता है, उसे मैं चंचल नहीं कहता। लेकिन जो खूब कातता है, उसे मैं खूब चंचल कहता हूं, क्योंकि वह समझता है कि उसे कैसे कातना चाहिए। वह समझता है कि उसके कातने से भारत की गरीबी कम होगी। वह अपने सामने घड़ी रखकर बैठेगा और देखेगा कि कितने समय में कितना काता है और दूसरों से तुलना करेगा। दूसरे लड़के एक घंटे में सात सौ गज कातते हैं तो वह भगवान से साढ़े सात सौ गज कातने की शक्ति मांगेगा और अन्त में साढ़े सात सौ गज कातकर चैन लेगा।

"अब मैं तुम्हें बताता हूं कि मूर्ख किसे कहते हैं। मूर्ख वह है, जिसे सन्तोष ही न हो। साढ़े सात सौ गज कातने के बाद भी जिसे ऐसा लगे कि अभी और कातना चाहिए। वह कहेगा कि मैं बढ़ता ही रहूंगा। ऐसा मूर्ख भी अच्छा और ऐसा चंचल भी अच्छा। ऐसे मूर्ख में नम्रता है, ऐसे चंचल में साहस है। हमें दोनों ही चाहिए। चंचल आगे रहेगा और मूर्ख आगे जाने की चेष्टा करेगा। दोनों भारत की सेवा के लिए प्रयत्न करेंगे। उनमें स्वार्थ नहीं होगा। वे सदा ब्रह्मचर्य का पालन करेंगे, दया का पालन

करेंगे। सहपाठी की सेवा करेंगे। माता-पिता के प्रति भक्ति रखेंगे। ऐसों को मैं मूर्ख और चंचल कहता और मानता हूं। चाहता हूं, तुम भी ऐसे ही बनो।"

: ६३ :

पहला काम पहले

एक बार ग्राम-सुधारकों को गांधीजी ने सलाह दी कि वे गांव की सफाई के हेतु मेहतर का काम किया करें।

कार्यकर्ताओं ने उत्तर दिया, "यदि हम मेहतर का काम करने लगेंगे तो गांव में हमारी जो प्रतिष्ठा है या गांववालों पर हमारा जो प्रभाव है उसे हम खो बैठेंगे। फिर कोई दूसरा काम करना असम्भव हो जायगा।"

लेकिन गांधीजी ने उनकी एक न सुनी। बोले, "पहला काम पहले। जहां भी कहीं कूड़ा-करकट हो वहां से वह तुरन्त हटा देना चाहिए। गन्दगी दूर करने के लिए कभी वक्त नहीं ढूंढ़ा जाता।"

गांधीजी केवल उपदेश देकर ही रह गये हों, यह बात नहीं, वह स्वयं और उनके साथी प्रतिदिन सवेरे जब सैर करने के लिए निकलते तो एक बालटी और फावड़ा साथ लेकर चलते थे। सड़क के किनारे जहां कहीं भी उन्हें कूड़ा या मल दिखाई देता, खाद बनाने के लिए उसे आश्रम में ले आया करते थे।

गीता का पाठ केवल पढ़ने के लिए नहीं होना चाहिए

बिहार-प्रवास में एक दिन सूचना मिली कि किसीने बारी-साहब का खून कर दिया। अब्दुल बारीसाहब गांधीजी के परम भक्त थे। उन्होंने देश के लिए फकीरी का जीवन बिताया था। बरसों से वह बिहार प्रान्तीय कांग्रेस समिति के अध्यक्ष थे।

इस अकल्पित समाचार से सब एकदम कांप उठे। बाद में पता लगा कि इस हत्या की तह में कोई राजनैतिक कारण नहीं था। बारीसाहब मोटर में बैठकर पटना आ रहे थे। उन दिनों चुंगी की बहुत चोरी होती थी। उसे रोकने के लिए सरकार ने गोरखा पुलिस तैनात की थी। उसके और बारीसाहब के बीच मोटर खड़ी न करने के कारण झगड़ा हो गया और इस झगड़े में सिपाही ने बारीसाहब को गोलियों से छेद दिया।

गांधीजी बोले, "वह बड़े भले थे, लेकिन उतने ही जिद्दी भी थे। अगर यह वृत्तान्त सही हो तो कहना पड़ेगा कि पहरे पर खड़े पुलिस को शंका होने पर बारीसाहब को मोटर रोकनी ही चाहिए थी। वह फकीर आदमी थे। बाल-बच्चों के लिए तांबे का एक पैसा भी उन्होंने नहीं कमाया। प्रेमपूर्वक कांग्रेस की अद्‌भुत और मूक सेवा की। कांग्रेस को उनके परिवार के निर्वाह के लिए जरूर विचार करना चाहिए।"

अगले दिन सब लोग बारीसाहब के घर गये। वहां करुण

क्रन्दन मचा हुआ था। उनकी लड़कियां जोर-जोर से पुकार रही थीं, "बापूजी, हमारे अब्बाजान कहां चले गये?" उनका रोना देखकर मनु भी रो पड़ी। लौटते समय गांधीजी ने उससे कहा, "तुममें अभी तक हिम्मत नहीं है। गीता का पाठ केवल पढ़ने के लिए नहीं होना चाहिए। मृत्यु तो एक ही सिक्के का दूसरा पहलू है। मैं तुम्हें इसलिए बेगमसाहिबा और लड़कियों के पास ले गया था कि वे सब तुम्हें कुटुम्ब की लड़की जैसी मानते हैं। लड़कियां तुम्हारी मित्र हैं, इसलिए तुम उन्हें आश्वासन दे सकोगी। परन्तु इसकी बजाय मुझे उन लड़कियों के साथ तुम्हें भी समझाना पड़ा। गीता के पाठ की ऐसे ही समय सच्ची परीक्षा होती है।"

: ६५ :

खून का दबाव बढ़े तो घूमने जायं

जे० सी० कुमारप्पा जब रक्तचाप से पीड़ित थे, तो डाक्टरों से अपनी परीक्षा कराने के लिए बम्बई गये। उन्होंने अच्छी तरह परीक्षा करने के बाद कहा, "शारीरिक प्रक्रिया में कोई गड़बड़ी नहीं है। रक्तचाप की शिकायत का कारण कमजोरी ही हो सकती है।"

कुमारप्पा यह रिपोर्ट लेकर गांधीजी के पास पहुंचे। गांधीजी बोले, "हमें इस कमजोरी का कारण खोजना ही होगा, अन्यथा न तो हम इसका उचित इलाज कर सकेंगे और न इसे जड़ से ही

दूर कर पायेंगे।"

बस उन्होंने कुमारप्पा की शारीरिक और मानसिक हलचलों द्वारा इसका पता लगाने का निश्चय किया। उस समय लाहौर के किसी कालेज की एक अध्यापिका कुछ समस्याओं पर विचार करने के लिए आई हुई थीं। गांधीजी ने उन्हें कुमारप्पा के पास भेज दिया और डा० सुशीला नैयर से कहा कि वह चर्चा के पहले और बाद उनके रक्तचाप की जांच करें।

पन्द्रह मिनट चर्चा करने के बाद देखा गया कि कुमारप्पा का रक्तचाप पन्द्रह डिग्री बढ़ गया था।

दूसरे दिन गांधीजी ने उद्योगशाला के प्रबन्धक को बुलाया। उनसे लकड़ी के एक तख्ते पर एक लकीर खिचवाई और बोले, "कुमारप्पा से कहो कि वे ठीक इसी लकीर पर आरी चलायें। साथ ही आरी चलाने से पहले और उसके बाद उनके रक्तचाप की जांच की जाय।"

उस दिन रक्तचाप २० डिग्री बढ़ गया। तीसरे दिन गांधीजी ने व्यायाम-शिक्षक को बुलवाया और कुमारप्पा से उनके साथ एक फर्लांग दौड़ने के लिए कहा। पहले की तरह रक्तचाप की परीक्षा की गई। इस बार पता लगा कि रक्तचाप पन्द्रह डिग्री नीचे उतर गया।

बस गांधीजी ने निश्चय किया कि लगातार मानसिक परिश्रम करने के कारण ही कुमारप्पा को रक्तचाप की शिकायत हो गई है। शारीरिक क्षीणता का उससें कोई संबंध नहीं। बोले, अब कभी भी खून का दबाव बढ़े तो आप घूमने के लिए चले जायं। मस्तिष्क पर अधिक जोर नहीं पड़ना चाहिए। इसलिए

निरन्तर बड़ी देर तक काम करने की आदत आप छोड़ दें। बीच में थोड़ा आराम कर लिया करें। ग्यारह या बारह बजे तक काम करें। उसके बाद दो घंटा आराम करें। इसीके अनुसार भोजन का समय भी बदल लें। जिससे पाचन क्रिया और मस्तिष्क का कार्य एक ही साथ शुरू न हो। इस प्रकार आप रक्तचाप की अपनी शिकायत पर बहुत कुछ काबू पा सकते हैं।"

: ६६ :

कला कल्याणकारी हो तभी मुझे स्वीकार्य है

एक संध्या को सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ दिलीपकुमार राय गांधीजी के संबंध में मॉ० रौलां का एक पत्र लेकर आये। दिलीपकुमार आवें और गांधीजी उनसे संगीत न सुनें, यह असम्भव जैसा ही था। आदेश होते ही दिलीपकुमार राय ने अपने सुमधुर स्वर में गाया, "जानकीनाथ सहाय करें।..."

पं० मोतीलाल नेहरू तो जैसे मुग्ध हो उठे और उन्होंने तुरन्त दूसरे भजन की मांग की। दिलीपकुमार ने दूसरा भजन गाया, "जब प्राण तन से निकलें।"

इसके बाद मॉ० रौलां का पत्र पढ़ा गया। उसमें गांधीजी के कला-संबंधी विचारों की चर्चा थी। दिलीपबाबू ने कहा, "मैं यह नहीं समझ पाता कि आप सृष्टि-सौंदर्य पर क्यों जोर देते हैं। क्या चित्रकार की कूंची और शिल्पकार की मूर्ति में वह सौंदर्य

नहीं है ?"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "मेरा काम इन सुन्दर चित्रों के बिना चल सकता है। इसीलिए मैंने कहा कि मेरी दीवार चित्र-रहित हो तो मुझे अच्छा लगता है। चित्रों द्वारा मुझे प्रभु की लीला निहारने की आवश्यकता नहीं। ईश्वर ने ऐसी भूमि और आबहवा में हमें रखा है कि सुन्दर सूर्योदय, चन्द्रिका, तारे, जल और थल, इन सबके दृश्य प्रत्यक्ष देखने को मिलते हैं। जहां बहुत दिनों तक सूरज नहीं दिखाई देता, उस लन्दन में ऐसे चित्रों की जरूरत पड़ सकती है। मेरा ध्येय सदा कल्याण का है। कला कल्याणकारी हो तभी वह मुझे स्वीकार्य है। मैं यूरोप की दृष्टि से कला को नहीं देखता। भारतीय कलाकारों ने अपनी कला मन्दिरों और गुफाओं में चित्रित कर उसे सार्वजनिक कर दिया है। गरीबों को ऐसे स्थानों पर जाकर जो चाहिए, मिल जाता है।"

दिलीपबाबू बोले, "लेकिन संगीत के विषय में आप क्या कहते हैं ? संगीत तो आप गरीब के लिए भी चाहेंगे।"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "हां, संगीत सारी कलाओं में सर्वोपरि है। इसका अनेक प्रकार से हमारे जीवन के साथ संबंध है। वह नाना रूपों में कल्याण-साधक है, गरीब-से-गरीब के लिए वह सुलभ है।"

दिलीपबाबू ने यूरोप के संगीत की चर्चा आरम्भ की। गांधीजी को भी उसका अनुभव था। देर तक चर्चा करने के बाद गांधीजी ने कला के संबंध में अपना मन्तव्य प्रकट करते हुए कहा, "कलाकार जब कला को कल्याणकारी बनाता है और जनता के लिए सुलभ कर देता है तभी उस कला को जीवन में स्थान

मिलता है। मैं मानता हूं जब कला सबकी न रहकर थोड़ों की हो जाती है तब उसका महत्व कम हो जाता है।"

दिलीपकुमार ने कहा, "तब तो इस दृष्टि से जो दर्शन लोगों की बुद्धि के लिए सहज गम्य न हो, जो काव्य या साहित्य साधारण लोगों के लिए सुबोध न हो, वह आपको पसन्द नहीं होगा।"

गांधीजी दृढ़ स्वर में बोले, "हरगिज नहीं होगा। बुद्धि का प्रत्येक व्यापार, जिसमें गरीबों को अलग करने की बात हो, उसकी कीमत जो सब लोगों के लिए है, उससे कम ही है। वही काव्य और साहित्य चिरजीवी रहेगा जो लोगों का होगा जिसे लोग आसानी से प्राप्त कर सकते हैं और सहज ही अपना सकते हैं।"

: ६७ :

मेरा धर्म अहिंसा है

यात्रा करते हुए गांधीजी मांगरोल पहुंचे। रात को सार्वजनिक सभा हुई। दूर पर कुछ अछूत बालिकाएं बैठी हुई थीं। उन्हें भी गांधीजी का स्वागत करना था। वे उठतीं, इससे पहले ही गांधीजी बोल उठे, "मनुष्य के धीरज का कहीं तो अन्त होता है। यदि अछूत बालाओं को वहीं से बोलना होगा तो मैं चुप नहीं रह सकता। तब तो कांग्रेस कमेटी की ओर से मुझे जो मानपत्र मिला वह आडम्बर हो जायगा। मैं तो कह चुका हूं मैं अंत्यज हूं, भंगी

हूं। ऐसे विशेषण देकर अपनी आत्मा को मैं प्रसन्न करता हूं। तब जिन्हें मैं अपना मानूं, उन्हें आप दूर रखें और मुझे पास रखना चाहें, यह कैसे हो सकता है ? आपने जो मेरी प्रशंसा की है, वह सच्ची हो तो हम जहां बैठे हैं, वहीं इन बच्चियों को बैठने के लिए कहना चाहिए। आपके स्वागत-द्वारों पर मैंने अस्पृश्यता-निवारण के सूत्र देखे हैं। यह या तो केवल आडम्बर है या आपकी असमर्थता को प्रकट करता है। मैं कहता हूं या तो आपने मुझे जो मानपत्र लिया है, वह वापस ले लीजिये या अछूतों के बीच में जाकर बैठने दीजिये। आप सच्चे दिल से चाहते हों कि अंत्यज भाई-बहन हमारे बीच में बैठें तो ऐसा कहिए। मेरा धर्म अहिंसा है। मैं आपको दुख पहुंचाना नहीं चाहता। मेरे कारण आप अंत्यजों को आने देंगे तो मेरी अहिंसा का लोप हो जायगा। परन्तु यदि आप समझते हैं कि मैंने धर्म-रक्षा की जो बात कही है, वह सही है तो अछूतों को आने दीजिये। आप उन्हें आने देने के विरुद्ध हाथ उठायंगे तो भी मुझे दुख नहीं होगा। आप निडर होकर राय दें।"

हाथ उठे। बुलाने के पक्ष में हजार से ऊपर थे और विरोध मे केवल पच्चीस-तीस। गांधीजी बोले, "अछूतों को अलग कहने वाला वर्ग छोटा-सा है। मैं नम्रतापूर्वक उन लोगों से कहता हूं कि वे हट जायं। यदि वे मेरी बात नहीं समझते तो अच्छा होगा, मैं ही जाकर अछूतों में बैठ जाऊं।"

एक ब्राह्मण उठा। उसने आरम्भ में गांधीजी की स्तुति की थी। वह बोला, "मैं ब्राह्मण हूं। यह ऐसी बात है, जिससे हम सबको दुख होता है। इसलिए मैं आपसे कहता हूं कि आप ही

अंत्यजों में जाकर बैठिए।"

लेकिन सभा ने तो अछूतों को अपने बीच में बैठाने के पक्ष में राय दी थी। गांधीजी धर्मसंकट में पड़ गये। उन्होंने सभा से प्रार्थना की, "इस समय हम आपकी राय के अनुसार काम नहीं कर सकते। मुझे वहां जाकर बैठने दें तो अच्छा है।"

यह कहकर गांधीजी अंत्यजों की ओर चले कि तभी एक और सज्जन उठे। गम्भीर स्वर में उन्होंने उस विरोधी ब्राह्मण से कहा, "देखिए, गांधीजी जायंगे तो उनके पीछे हम भी जायंगे। आप तो अलग-के-अलग ही रहेंगे। इसलिए आप ही हट जायं तो क्या बुरा है?"

वह ब्राह्मण समझ गये। वह उठे। उनके साथ दो-तीन व्यक्ति और उठे। शेष व्यक्ति जिन्होंने अछूतों के विरुद्ध हाथ उठाये थे, वे यह कहकर 'घर जाकर नहा लेंगे' वहीं बैठे रहे। रात के लगभग ग्यारह बज रहे थे। उस समय वे अछूत कन्याएं सवर्णों के बीच आकर यह गरबा गाने लगीं :

ऐसे गांधी गुजरात में जन्मे रे
ये तो लगते पोचे-पोचे बनिये रे,
पर करते ये शूरवीर का काम...ऐसे...

●

संदर्भ

इस पुस्तक के प्रसंग जिन पुस्तकों से सम्पादित रूप में लिये गए हैं, उनके नाम, प्रसंगों की संख्या तथा लेखकों के नाम साभार दिये जा रहे हैं :

अकालपुरुष गांधी (जैनेन्द्रकुमार) १४
एकला चलो रे (मनुबहन गांधी) ४६
कुछ देखा, कुछ सुना (घनश्यामदास बिड़ला) २४
गांधी : व्यक्तित्व, विचार और प्रभाव (संकलन) श्रीप्रकाश १७, २२
" " " (संकलन) वियोगी हरि २६
" " " (संकलन) महावीर त्यागी ३७
" " " (संकलन) जगजीवनराम ४६
" " " (संकलन) रामनाथ सुमन १
गांधीजी की साधना (रावजीभाई पटेल) ६
गांधीजी के जीवन-प्रसंग (संकलन) एस० के० जार्ज ३
" " (संकलन) राजकुमारी अमृतकौर १२
" " (संकलन) जे० सी० कुमारप्पा ५६, ६५
" " (संकलन) भारतन कुमारप्पा ६३
गांधीजी के चरणों में (व्रजकृष्ण चांदीवाला) १८
गांधीजी के संपर्क में (सम्पा० चन्द्रशंकर शुक्ल) २, ७, १६, २३, २६, ३१, ३४, ३८, ३६, ४१, ४४, ५७, ६०
गांधी शताब्दी पारिजात स्मारिका (महेशप्रसाद सिंह) ६८
जीवन प्रभात (प्रभुदास गांधी) ६, ३५, ४०, ४३, ४७, ५०, ५८
दीदी, मार्च १९४८ (श्रीनाथ सिंह) ८, ५४

इस माला

की

पुस्तकें

□

१. प्रभु ही मेरा रक्षक है
२. संगठन में ही शक्ति है
३. यदि मैं तानाशाह बना
४. त्याग हृदय की वृत्ति है
५. मेरा पेट भारत का पेट है
६. मैं महात्मा नहीं हूं
७. यह तो सार्वजनिक पैसा है
८. हम कभी दम्भी न बनें
९. मेरा धर्म सेवा करना है
१०. हे राम ! हे राम !!

सस्ता साहित्य मंडल • श्री कृष्ण जन्म-स्थान सेवा-संस्थान • संयुक्त प्रकाशन